तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

सचित्र मासिक पत्रिका

फरवरी - 2019, रु. 5/-

श्रीनिवासमंगापुरम्
श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी का
वार्षिक ब्रह्मोत्सव

२४-०२-२०१९ से
०४-०३-२०१९ तक

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

श्रीनिवासमंगापुरम् श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी का ब्रह्मोत्सव

२७.०२.२०११ से ०७.०३.२०११ तक

२७.०२.२०११ रविवार
दिन - तिरुचि उत्सव, ध्वजारोहण
रात - महाशेषवाहन

२८.०२.२०११ सोमवार
दिन - लघुशेषवाहन
रात - हंसवाहन

०१.०३.२०११ मंगलवार
दिन - सिंहवाहन
रात - मोतीवितानवाहन

०२.०३.२०११ बुधवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - सर्वभूपालवाहन

०३.०३.२०११ गुरुवार
दिन - पालकी में मोहिनी अवतारोत्सव
रात - गरुडवाहन

०४.०३.२०११ शुक्रवार
दिन - हनुमद्वाहन
संध्या - वसंतोत्सव
रात - गजवाहन

०५.०३.२०११ शनिवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

०६.०३.२०११ रविवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - अश्ववाहन

०७.०३.२०११ सोमवार
दिन - पालकी उत्सव, तिरुचि उत्सव, तीर्थवारि अवभृथोत्सव, चक्रस्नान
रात - तिरुचि में ध्वजावरोहण

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः।।
(- श्रीमद्भगवद्गीता २-१६)

असत् वस्तु की तो सत्ता नहीं है और सत् का अभाव नहीं है। इस प्रकार इन दोनों का ही तत्त्व तत्त्वज्ञानी पुरुषों द्वारा देखा गया है।

पुस्तकं हेम संयुक्तं गीतायाः प्रकरोति यः।
दत्वा विप्राय विदुषे जायते न पुनर्भवम्।।
(- गीता मकरंद, गीता की महिमा-६६)

गीता ग्रन्थ का सुवर्ण के साथ जो मनुष्य ब्राह्मण (ब्रह्मनिष्ठ) को दान देता है, वह फिर इस संसार में पैदा नहीं होगा।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

श्री वेंकटेश्वर अन्नप्रसाद ट्रस्ट

तिरुमल, तिरुचानूरों में हजारों की संख्या में भक्तों को प्रतिदिन अन्नप्रसाद वितरण होने की बात भक्तों को विदित ही है। अब ति.ति.दे. अन्नप्रसाद ट्रस्ट ने भक्तों, दाताओं को दान देने का और खुला अवसर देना चाहता है। इसलिए...

एक दिन दान की योजना

प्रवेश कर रहा है।

एक रोजाना खर्च

१. अल्पाहार - ६ लाख

२. मध्याह्न भोजन - १० लाख

३. रात्रि भोजन - १० लाख

कुल - २६ लाख

इस नकद को दाताओं से संग्रहित करने के लिए सिद्ध हो रहा है तिरुमल तिरुपति देवस्थानों का अन्नदान ट्रस्ट।

दाताओं - व्यक्तियों/कंपनियों/संस्थाओं/ट्रस्टों/संयुक्त ढंग की व्यवस्था हो सकती है।

ये रोजवारी नकद कुल २६ लाख या अल्पाहार-६ लाख या दोपहर का भोजन-१०लाख / रात्रि भोजन-१० लाख प्रदान कर सकते हैं।

दाताओं को ति.ति.देवस्थान के द्वारा आयोजित सुविधाएँ एक-रीत होंगी।

अन्य विवरण के लिए संपर्क करें-

विशेषाधिकारी,
श्री वेंकटेश्वर अन्नप्रसाद ट्रस्ट,
ति.ति.दे.प्रशासनिक भवन,
के.टी.रोड,
तिरुपति-५१७ ५०७.

(www.tirumala.org वेबसाइट में भी दरस सकेंगे)

दूरभाषा - ०८७७-२२६४२५८,
०८७७-२२६४३७५,
०८७७-२२६४२३७.

सप्तगिरि

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं
ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन,
वेङ्कटेश समो देवो
न भूतो न भविष्यति।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की
सचित्र मासिक पत्रिका

वर्ष-४९ फरवरी-२०१९ अंक-९

विषयसूची

भक्त पुरंदरदास	डॉ.के.एम.भवानी	07
माघ मास का महत्व	श्री ज्योतीन्द्र के. अजवालिया	09
वन्देहम् - श्री सूर्यदेवम्	श्री वेमुनूरि राजमौलि	12
भीष्म एकादशी	श्रीमती प्रीति ज्योतीन्द्र अजवालिया	14
श्री कुलशेखर स्वामीजी	श्रीमती शिल्पा केशव रांदड	16
श्री धनुर्दास स्वामीजी	श्रीमती शकुंतला उपाध्याय	20
तिरुमालै आंडान	श्री मधुसूदन लक्ष्मीनारायण रान्दड	25
श्री मणक्काल्नम्बि (श्री राममिश्र स्वामीजी)	श्री चन्द्रकान्त घनश्याम लहोती	31
शरणागति मीमांसा	श्री कमलकिशोर हि तापडिया	33
भागवत कथा सागर - श्री वराह अवतार	श्री अमोघ गौराँग दास	35
श्री रामानुज नूट्रन्दादि	श्री श्रीराम मालपाणी	38
कछुवा सुरक्षा	श्री अमोघ गौराँग दास	39
सर्वव्यापी भगवान के प्रति समर्पण	श्रीमती अंकुश्री	41
स्नान की महत्ता	श्री डी.चैतन्यकृष्ण	43
कपिलेश्वरा! स्वयंभूलिंगेश्वरा!!	डॉ.जे.सुजाता	44
मनोभीष्ट सिद्धि प्रदाता श्री सत्यनारायण स्वामी	डॉ.एस.पी.वरलक्ष्मी	48
आदिदेव नमस्तुभ्यं... ममजीवन भास्करा!!	श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण	50
राशिफल	डॉ.केशव मिश्र	53

गौरव संपादक
श्री अनिलकुमार सिंघाल, आई.ए.एस्.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री आर.वी.विजयकुमार, बी.ए., बी.एड्.,
उपकार्यनिर्वहणाधिकारी,
(प्रचुरण व मुद्रणालय),
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

श्री पी.शिवप्रसाद,
सेवानिवृत्त चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

मुखचित्र
**उभयदेवेरियों सहित
श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामी,
श्रीनिवासमंगापुरम्।**

चौथा कवर पृष्ठ
**श्री कामाक्षी समेत श्री कपिलेश्वरस्वामी,
कपिलतीर्थ, तिरुपति।**

सूचना
मुद्रित रचनाओं में व्यक्त किये विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।
— प्रधान संपादक

अन्य विवरण के लिए:
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543. Mobile No:9866329955.

website: www.tirumala.org or www.tirupati.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri_helpdesk@tirumala.org

एक प्रति	.. रु. 05-00
वार्षिक चंदा	.. रु. 60-00
जीवन चंदा	.. रु.500-00
विदेशियों को वार्षिक चंदा	.. रु.850-00

संपादकीय

विमूढ़ों के त्राता

भूमि को स्थापित कर उसकी रक्षा करते भगवान श्रीमन्नारायण, अपने भक्तों को पाँच दशाओं में अपनी सेवा प्रदान करते हैं। वे हैं परम, व्यूह, विभव, अंतर्यामी, अर्चा आदि। परम माने जाने वाले श्रीवैकुंठ तो हम जैसे सांसारिक मानव के लिए अप्राप्य है। व्यूह तो दुग्ध सागर में शयन करने वाले भगवान विष्णु का एक रूप है। दुग्ध सागर तो बाहरी चक्षु के लिए अदृश्यमान है। उसका दर्शन तो सिर्फ बडे तपस्वी एवं ज्ञानी के लिए साध्य है। विभव तो अवतार का दर्शन है। भगवान के मत्स्यावतार से लेकर कृष्णावतार तक के समय के युग तो भिन्न-भिन्न हैं। इसलिए उनका दर्शन भी असंभव है। अगला तो अंतर्यामी है। मतलब यह है कि अंतर मन में निवास भगवद्गीता में कहा गया है कि सर्वस्य चाहं हृदि सन्नि विष्टो। याने, सभी जीवों के मन में स्थापित होना है। इसका अनुभव करने के लिए कर्म, ज्ञान और भक्ति योग में अभ्यास की जरूरत है। मतलब है, हमें खुद महान या ज्ञानी होना चाहिए। अंत में तो बचा है, अर्चा दशा। याने देखकर मन में ग्रहण करने हेतु सुगम्य विग्रह के रूप में मन्दिर में सेवा प्रदर्शन करना है।

इस अर्चामूर्ति को ही आल्वारों ने चुनकर, लिखकर, पढकर, सुनकर, नमनकर, पूजनकर अपना जीवन यापन किया। वे आल्वार भगवान के द्वारा स्पष्ट ज्ञान प्राप्त कर चुके थे। इसलिए आल्वारों से रचित सभी पद दिव्यप्रबंध बन गये। उनके गीत गाये गये सभी स्थान तो दिव्य क्षेत्र बन गये। वे ही १०८ दिव्य क्षेत्र भगवान विष्णु के लिए महिमान्वित मुख्य मंदिर हैं। सभी अर्चामूर्ति तो मंगल विग्रह बन गयीं। आल्वार सब दिव्य दिनकर बन गये। याने सब कुछ दिव्य रूप में परिवर्तित हो गये।

दिव्यप्रबन्ध द्वारा आल्वारों ने यह संदेश संसार को देना चाहा कि, हमें भगवान को कही ढूँढ फिरने की जरूरत नहीं है। सब में वे ही हैं। ऐसा विचार और व्यवहार हमें भगवद कृपा पात्र के लिए योग्य बनायेगा। खासकर भगवद् भक्ति को अंकुरित करेगा। उसके बल से भगवद् कृपा एवं भगवद् भक्ति की प्राप्ति होगी। इसी को कुलशेखर आल्वार ने ''तरु तुयरम तडायेल'' नामक शीर्षक में ऐसा कहते हैं, ''अरिसिनत्ताल ईंड्र ताय अगट्रिडिनुम् मट्रवल तन अरुल निनैंदे अलुम कुलवियदुवे पोंरु इरुंदेने।'' याने माता गुस्से में अपने बच्चे पर घृणा दिखाने पर भी, वह मासूम बच्चा उसकी दया के लिए उसी के पास जाने के बराबर, मुझे जितना भी संकट दें, मैं भगवान के शरण से दूर नहीं हटूँगा। यही तो आत्मा-परमात्मा के बीच का सच्चा रिश्ता है।

आल्वारों ने इस संसार को घना अंधकार दुनिया कहा है। वह अंधकार तो अज्ञान का है। मैं, मेरा विचारवाला अहंकार और ममकार ही वह अंधकार है। जब तक ये दोनों हम में निवास करते हैं, तब तक हमारा मन अपना संयम खोकर आजाद रहता है। इससे आत्मा बुरे पथ पर जाकर शरीर का गुलाम बनकर दिव्य सुख को प्राप्त नहीं कर पाता। इसे संसार को समझाने के लिए आल्वारों का जन्म हुआ। बाहरी अंधेरा को दूर करने आये बारहों सूर्य जैसे, आंतरिक अंधेर को दूर करने आये दिनकर बराबर आल्वारों का अवतार हुआ।

इस महीने में आल्वारों के राजा कुलशेखर आल्वार के जन्म नक्षत्र को और इस महीने में होने वाला रथसप्तमी का सूर्य जयंती को एक साथ मनाकर, एक सात बाहरी एवं आंतरिक अंधेरा को दूर करेंगे सुखी जीवन बितायेंगे।

भक्त पुरंदरदास

- डॉ.के.एम.भवानी

'कर्नाटक संगीत पितामह' नाम से विख्यात श्री पुरंदरदास भगवान श्रीकृष्ण (विट्ठलनाथ) के महान भक्त थे। अपने नाम के साथ भगवान का नाम जोड़कर 'पुरंदर विट्ठल' मुद्रा से उन्होंने करीब चार लाख से ज्यादा 'देवर्नामालु' की रचना की। देवर्षि नारद का अंश समझा जानेवाला उनका जन्म १४८४ में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके जन्म स्थान के बारे में भिन्न विचार हैं- कुछ लोगों के अनुसार उनका जन्मस्थान कर्नाटक राष्ट्र है तो और कुछ के अनुसार महाराष्ट्र है। उनके माता-पिता थे वरदप्पा और कमलांबा। वे बहुत धनवान होने के कारण लोग उन्हें 'नायक' कहकर पुकारते थे। वरदप्पा नायक हीरों को परखने में बहुत निपुण थे। यही विद्या उन्होंने अपने इकलौती संतान श्रीनप्पा को भी सिखाया। पुरंदरदास तिरुमल बालाजी के वर से पैदा होने के कारण माता-पिता उन्हें 'श्रीनिवास' नाम रखा था। लेकिन लोग उन्हें श्रीनप्पा, श्रीनु, तिरुमल्लय्या आदि नामों से पुकारते थे। बचपन में ही वे कन्नड संस्कृत भाषाओं में निपुण बनने के साथ-साथ संगीत में भी निपुण हो गए। श्रीनप्पा को सोलहवें साल में सरस्वती नामक कन्या से शादी हुई। उसके बीसवें साल में ही अचानक उसके माँ-बाप का देहांत हो गया। परिवार का पूरा भार श्रीनप्पा पर आ गया। तब से श्रीनप्पा चतुराई से व्यापार करके बहुत पैसे कमाने लगा। लेकिन पैसों के साथ-साथ वह कंजूस भी बनता गया।

कंजूस श्रीनप्पा भक्त पुरंदरदास कैसे बना - इसके पीछे एक कहानी है। एक ब्राह्मण अपने बेटे की जेनऊ पर्व के लिए धन की मदद माँगने के लिए श्रीनप्पा के पास गया। हर दिन श्रीनप्पा उसे दूसरे-तीसरे-चौथे दिन आना, ऐसा कहते हुए घुमाने लगा। अंत में ब्राह्मण ने ऊबकर श्रीनप्पा की पत्नी सरस्वती के पास जाकर सहायता माँगी। तब दयालु सरस्वती ने माना कि जेनऊ पर्व के लिए पैसे माँगने पर न नहीं कहना चाहिए। इसलिए वह अपनी 'नथ' को देकर उसे बेचकर पैसे लेने के लिए कहती है। संयोगवश वह ब्राह्मण उस नथ को बेचने के लिए श्रीनप्पा के पास ही जाता है। उसे देखते ही श्रीनप्पा ने पहचान लिया कि यह नथ उसकी पत्नी की ही है। वह तुरंत घर जाकर पत्नी से नथ के बारे में पूछा। वह डर से उत्तर न दे पाई तथा घबरा गई और आत्महत्या करने के लिए उद्यत हुई। एक प्याले में विष लेकर पीने के लिए तैयार हो जाती है, तभी उसे प्याले में नथ मिल जाती है। यह बात जानकर श्रीनप्पा की आँखे खुली। वह उस ब्राह्मण को ढूँढने लगा तो उसे वह कहीं नजर नहीं आया। तब श्रीनप्पा समझ गया कि वह ब्राह्मण और कोई दूसरा नही था, बल्कि अपने कुल देवता विट्ठलनाथ जी था। तब वह अपनी सारी संपत्ति को गरीबों में बाँट दिया। तभी उसने वह अपने पहले गाने की रचना की।

मोसहोदेनल्ला तिलियदे मोसहोदेनल्ला
सति सुतादि बंधु बलग हितव नुडिवर्वारो।
गति नीने तंदेताइ नीने सद्गति ईयो पुरंदर विट्ठला।।

आँखे खुलने के बाद पुरंदरदासजी तीर्थ यात्रा करने निकला। तो व्यासरायजी उनके गुरु बनकर उन्हें १५२५ में उसके चालीस वें साल में उसे हरिदास बनने का आशीर्वाद देकर उसका नाम पुरंदरदास रख दिया। तब से पुरंदरदास श्रीकृष्ण की भक्ति में लीन रहकर करीब ४,२५,००० के ''दासर पदगलु'' या ''देवर नामगलु'' की रचनाएँ की। (पुरंदरदास की रचनाओं को इन्हीं नामों से पुकारते हैं) कहा जाता है कि इनकी सच्ची भक्ति से मुग्ध होकर पुरंदरविट्ठल ने इन्हें कई बार दर्शन दिए।

रचनाओं की विशेषता - ''दासर पदगलु'' नाम से प्रसिद्ध पुरंदरदास की रचनाओं में पुराण और उपनिषदों का सार है। इनकी रचनाओं में अच्छे-अच्छे मुहावरे और तुलनाएँ भी हैं। खुद संगीतज्ञ होने के कारण संगीत के महत्व को पहचानकर सब लोग गाने लायक सरल भाषा में इन्होंने रचनाएँ की। इनकी रचनाओं की भाषा कन्नड़ है लेकिन इनकी रचनाएँ सभी भाषाओं के लोग गाने योग्य और मनमोहक है। इनकी कुछ रचनाएँ संस्कृत में भी लिखी गयी हैं। 'मायामालव गौल' राग को संगीत अभ्यास के लिए आदि राग बनाने की ख्याति इन्हीं को मिलती है। संगीत सीखना ही नहीं, जाननेवालों को भी पुरंदरदासजी की यह रचना अच्छी तरह से मालूम है जिसके साथ शास्त्रीय संगीत का अभ्यास शुरू की जाती है-

लंबोदरा लकुमिकरा अंबासुत अमरविनुता
सकल विद्या आदि पूजिता सर्वोत्तम ते नमो नमो।।लंबो।।

नारद का अवतार - पुरंदरदासजी को नारद मुनि का अवतार माना जाता है। कहा जाता है कि इसीलिए हमेशा इनके हाथ में वीणा विराजमान रहता था। श्री विजय विट्ठल दासरजी ने अपनी गुरु वंदना में इसी बात को स्पष्ट करते हुए गायन किया कि-

गुरु पुरंदरादासरे निम्म
चरणकमलव नंबिदे।।
गुरुवरहितन मदि एन्नु पोरिवे
भरवु..................निम्मदे।।
मारजनकन सन्निधानादि सारगानवा माडुवा।
नारदरे ई रूपदिंडली चारु दरशना तोरिदा।।

तिरुपति बालाजी और अन्नमाचार्यजी से पुरंदरदास का संबंध- तिरुपति बालाजी के वर से जन्म श्रीनिवास, पुरंदरदास बनने के बाद बालाजी के दर्शन करने तिरुमल पधारे। बालाजी पर उनकी यह प्रसिद्ध रचना सब भक्तों के जीभों पर नाचती रहती है-

''वेंकटाचल निलयम वैकुंठपुरवासम्''

बालाजी के दर्शन के बाद उनकी मुलाकात नंदकांश संभूत पदकवितापितामह अन्नमाचार्यजी से हुई। जब पुरंदरदास अन्नमाचार्यजी से मिलने गए तब अन्नमाचार्यजी भक्ति में लीन होकर गा रहे थे। 'शरणु शरणु सुरेंद्र सन्नुता शरणु श्रीसति वल्लभा' यह सुनकर पुरंदरदास ने भी एक 'देवरनाम' की रचना की।

शरणु शरणु सुरेंद्र वंदिता शरणु श्रीसति सेविता
शरणु................पक्षिवाहना नादा पुरंदरविट्ठल निजदानने।

उनका यह गाना सुनकर अन्नमाचार्यजी ने उन्हें आशीर्वाद दिया कि आपके गाने, कर्णाटक संगीत के लिए आदि गान होंगे।

पुरंदरदास का संगीत के लिए योगदान - कर्णाटक संगीत के आदि गुरु माने जानेवाले पुरंदरदासजी ने संगीत की महानता को पहचानकर सारे लोग आसान रीति से संगीत को सीखें। इसके लिए 'मायामालव गौला' राग में प्रारंभिक स्तर की स्वरावलियों से लेकर कीर्तन तक क्रमबद्ध पाठों की रचना करके हमें एक निधि को ही प्रदान किया। इन्होंने स्वरावलियों, अलंकार, पिल्लारिगीत, धनरागगीत, शूलादियाँ, देवरनामा आदि की रचना की। इन्होंने द्विजावंती, श्यामकल्याणी, मारवी, मधुमाधवी जैसे अपूर्व रागों में रचना की। संगीत के त्रिमूर्ति माने जानेवाले त्यागराज, श्यामाशास्त्री तथा मुत्तुस्वामी दीक्षितुलु ने पुरंदरदास जी के प्रति गुरु भाव को प्रकट करते हुए अपनी कई रचनाओं में श्रद्धा भाव प्रकट की। पुरंदरदास अपनी जिंदगी के अंतिम चरण में सन्यास आश्रम स्वीकार करके 'हंपी' शहर के एक मंदिर के मंडप में रहे थे। इसीलिए आज भी उस जगह को ''पुरंदरदास मंडप'' कहते हैं। वहीं पर सन् १५६४ 'रक्ताक्षी' नामक साल के पुष्य मास के अमावस्या के दिन वे पुरंदर विट्ठल में लीन हो गए। आज भी उनकी इस पुण्य तिथि के अवसर पर हर साल तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् 'दास साहित्य प्राजेक्ट' के अंतर्गत उत्सव मनाती है।

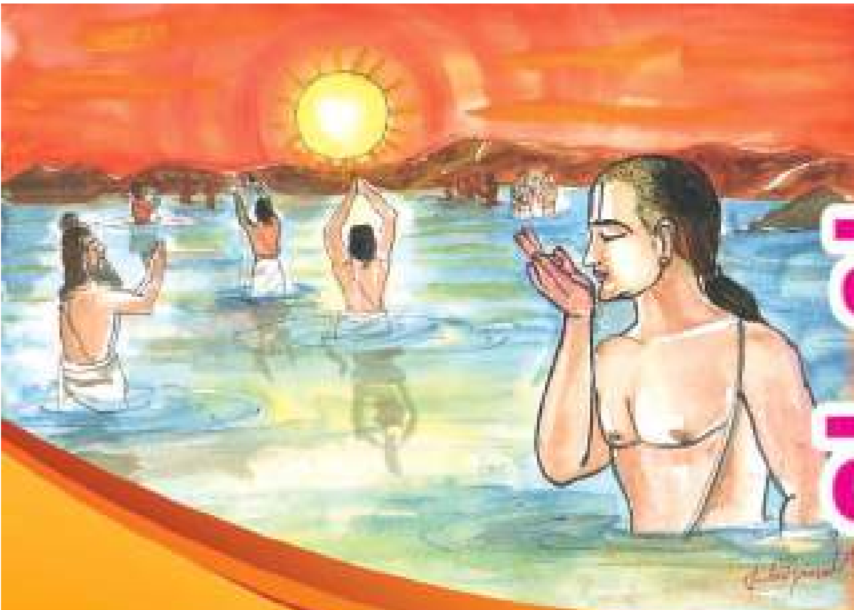

माघ मास का महत्व

- श्री ज्योतीन्द्र के. अजवालिया

हमारी संस्कृति संप्रदायों के अनुसार हर एक मास का अपना एक विशेष महत्व है। आज हम यहाँ माघ मास का विशेष महत्व क्या है? इसके बारे में जानकारी लेंगे।

पुराणों में बताया है कि, पोष (पुष्य) मास की पूर्णिमा से लेकर माघ मास की पूर्णिमा तक माघ मास में पवित्र नदी नर्मदा, गंगा, यमुना, सरस्वती, कावेरी सहित अन्य जीवनदायिनी नदियों में स्नान करने से मनुष्य को समस्त पापों से छुटकारा मिलता है तथा उसके मोक्ष का मार्ग भी खुलता है।

मासपर्यन्तस्नानाभावे तु त्रयमेकाहं वा स्नायात्।।

अर्थात् - जो लोग लंबे समय तक स्वर्ग लोक का आनंद लेना चाहता हैं, उन्हें माघ मास में सूर्य के मकर राशि में उपस्थित रहने पर तीर्थ स्नान अवश्य करना चाहिये।

तीर्थस्नान करने से पूर्व यह संकल्प अवश्य करना चाहिए...

संकल्प-

ॐ तत्सत् अद्य माघे मासि अमुक पक्षे अमुक तिथिमारभ्य मकरस्त रविं यावत् अमुकगोत्र अमुक शर्मा वैकुंठनिवासपूर्वक श्री विष्णुप्रीत्यर्थे प्रातः स्नानं करिष्ये।

शास्त्र के वचनानुसार माघ स्नान का संकल्प, पोष पूर्णिमा के दिन लेना चाहिये। अगर इस दिन को संकल्प नहीं लिया तो, माघ मास में तीर्थ स्नान के दौरान यह संकल्प करना चाहिए, तथा साथ-साथ में माघ मास में नित्य भगवान श्रीहरि विष्णु का पूजन, अर्चना भी करना चाहिए। साथ ही संभव हो तो दिन में एक बार भोजन का व्रत भी करना चाहिए।

माघ मास में स्नान के साथ-साथ श्री विष्णु पूजन एक बार भोजन व्रत और विशेष रूप से दान करने का भी बहुत महत्व है। माघ मास में, दान में तिल, गुड और कंबल या ऊनी वस्त्र का दान करने से विशेष पुण्य प्राप्त होता है।

माना जाता है कि, माघ मास में पवित्र नदियों में स्नान करने से एक विशेष सकारात्मक ऊर्जा का प्रसार होता है। शास्त्रों में बताया गया है कि इस माह में पूजा - अर्चना, दान एवं तीर्थस्नान का पर्यटन करने से नारायण को प्राप्त किया जा सकता है, तथा स्वर्ग का मार्ग भी खुल जाता है।

माघ मास का धार्मिक महत्व क्यों है?

धार्मिक दृष्टि से माघ मास का बहुत अधिक महत्व है। भारतीय तिथिपत्र का ग्यारहवां चन्द्रमास या दसवां सौरमास, 'माघ मास' कहलाता है। इस महीने में मघा नक्षत्रयुक्त

माघ मास (५.२.२०१९ से ६.३.२०१९ तक) के संदर्भ में...

माघ मास में पूर्णिमा को जो व्यक्ति ब्रह्मवैवर्त पुराण का दान करता है, उसे ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि माघ मास में ब्रह्मवैवर्त पुराण की कथा सुनना चाहिए। यह संभव न हो सके तो माघ माहात्म्य अवश्य सुनना चाहिये। अतः इस मास में स्नान, दान उपवास और भगवान माधव की पूजा अत्यंत फलदायी होते हैं।

पूर्णिमा के होने से इसका नाम माघ पड़ा। इस मास में शीतल जल के भीतर डुबकी लगाने वाले मनुष्य पाप मुक्त होकर स्वर्ग लोक में जाते हैं।

माघे निमग्नाः सलिले सुशीते विमुक्तपापास्त्रिदिवं प्रयान्ति।

धर्मग्रंथ आधारित माघ मास की महिमा

जाने किस ग्रंथ में माघ महीने की महिमा के लिये क्या लिखा है? माघ मास में प्रयाग में स्नान, दान, भगवान विष्णु के पूजन एवं हरिकीर्तन के महत्व का वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसीदासजी ने श्रीरामचरितमानस में लिखा है यथा-

माघ मकरगत रवि जब होई, वीरतपविहिं भाव सब कोई।।
देवदगुन किन्नर नर श्रेनी। सादर मज्ञहिं सकल त्रिवेनी।।
पूजहिं माधव पद जलजाता। परसि अख य बदु हरषहिं गाता।।

पद्म पुराण - पद्म पुराण के उत्तरखंड में माघ मास के माहात्म्य का वर्णन करते हुए कहा गया है कि, व्रत दान और तपस्या से भी भगवान श्रीहरि को उतनी प्रसन्नता नहीं होती, जितनी कि माघ महीने में स्नान मात्र से होती है। इसलिये स्वर्गलाभ, सभी पापों से मुक्ति और भगवान वासुदेव की प्राप्ति के लिए प्रत्येक मनुष्य को माघ में पवित्र नदी स्नान अवश्य करना चाहिए।

महाभारत

माघ मास में नियम पूर्वक एक समय भोजन करता है, वह धनवान के घर में जन्म लेकर अपने कुटुंब में प्रतिष्ठा को प्राप्त करता है। माघ मास की अमावस्या को प्रयागराज में स्नान से अनंतपुण्य प्राप्त होते हैं। माघ मास की द्वादशी तिथि को दिन-रात उपवास रखकर भगवान नारायण की पूजा करने से उपासक को राजसूय यज्ञ का फल प्राप्त होता है।

निर्णयसिंधु - कहा गया है कि माघ मास के दौरान मनुष्य को कम से कम एक बार पवित्र नदी में स्नान करना चाहिये। भले ही पूरे माह स्नान के योग न बन सके लेकिन एक दिन के स्नान से श्रद्धालु स्वर्ग लोक का हकदार बन सकते हैं।

मत्स्य पुराण में कहा गया है कि

प्रीतये वासुदेवस्य सर्वपापविमुक्तये।
माघस्नानं प्रकुर्वीत स्वर्गलाभाय मानवः।।

माघ मास में पूर्णिमा को जो व्यक्ति ब्रह्मवैवर्त पुराण का दान करता है, उसे ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि माघ मास में ब्रह्मवैवर्त पुराण की कथा सुनना चाहिए। यह संभव न हो सके तो माघ माहात्म्य अवश्य सुनना चाहिये। अतः इस मास में स्नान, दान उपवास और भगवान माधव की पूजा अत्यंत फलदायी होते हैं।

माघ स्नान महत्व की पौराणिक कथा

प्राचीन काल में नर्मदा नदी के तट पर सुव्रत नामक एक ब्राह्मण रहता था। वह समस्त वेद-वेदांगों,

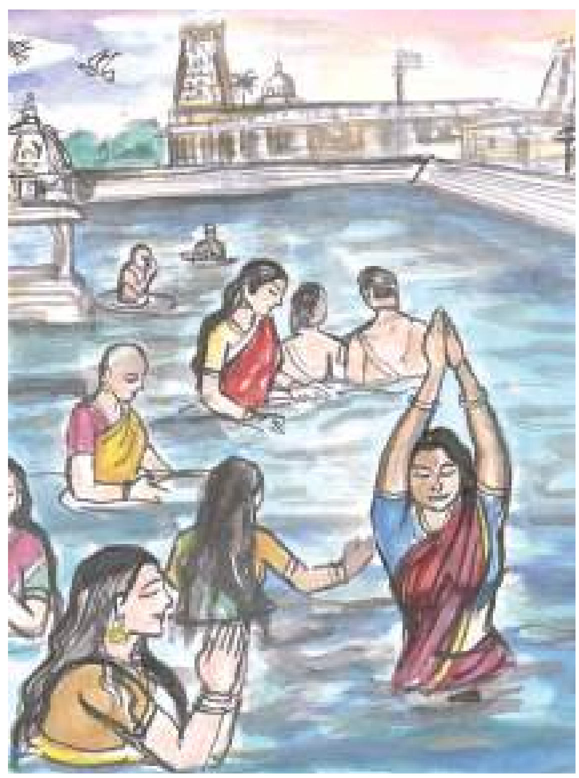

धर्म शास्त्रों व पुराणों का ज्ञाता था। वह अनेक देशों की भाषाओं व लिपियों का ज्ञाता था। इतना विद्वान होते हुए भी उसने अपने ज्ञान का उपयोग धर्म कार्य में नहीं किया। पूरा जीवन केवल धन कमाने में गँवा दिया। जब सुव्रत बूढ़ा हो गया तब उसे स्मरण हुआ कि मैंने धन तो बहुत कमाया, लेकिन परलोक सुधारने के लिए कोई भी काम नहीं किया।

यह सोचकर वह पश्चात्ताप करने लगा। उसी रात को चोरों ने उसके सारे धन को चुरा लिया, लेकिन सुव्रत को इसका लेश मात्र दुःख नहीं हुआ क्योंकि वह तो परमात्मा को प्राप्त करने के लिए उपाय सोच रहा था। तभी सुव्रत को एक श्लोक का स्मरण आया।

माघे निमग्नाः सलिले सुशीते।
विमुक्तपापास्त्रिदिवं प्रयान्ति।

सुव्रत को अपने उद्धार के लिए मूल मंत्र मिल गया। सुव्रत ने माघ स्नान का संकल्प लिया और नौ दिन तक प्रातः नर्मदा के जल में स्नान किया। दसवें दिन स्नान के बाद उसने प्राणत्याग किया। उसी समय उसे वैकुंठ में ले जाने के लिये एक दिव्य विमान आया। उसमें बैठकर वह वैकुंठ को चला गया। इस तरह माघ मास में स्नान करके सुव्रत ने मोक्ष को प्राप्त कर लिया।

मनुष्य को अपने उद्धार के लिये, हमारे शास्त्रानुसार माघ मास में पवित्र नदी के शीतल जल में स्नान करके, एक समय भोजन का नियम रख के, नित्य प्रति वासुदेव की पूजा अर्चना करके, अंत में तिल, गुड तथा कंबल आदि का दान करके अपने जीवन को धन्य बना लेना ही हमारा परम धर्म है।

जय श्रीमन्नारायण...

यात्रियों को सूचना

मुफ्त में सामान परिवहन केन्द्रः तिरुपति के अलिपिरि से और श्रीवारि मेट्टु से पैदल रास्ते में जानेवाले भक्तों को अपने सामान को अलिपिरि और श्रीवारि मेट्टु के पास स्थित मुफ्त सामान परिवहन केन्द्र में देना चाहिए। फिर इस सामान को तिरुमल स्थित सामान परिवहन केन्द्र से वापस लेना होगा।

तिरुमल तिरुपति घाट रोड में यान करनेवाले यात्रियों के लिए विज्ञापन

नीचे सूचित समयों के बीच वाहनदारों का प्रवेश रद्ध कर दिया गया है।

१. द्विचक्रवाहन - रात ११.०० बजे से प्रातःकाल ४.०० बजे तक

२. अन्य वाहन (कार और बस) - अर्थरात्रि १२.०० बजे से प्रातःकाल ३.०० बजे तक

३. कुछ अनिवार्य कारणों के कारण उपर्युक्त समयों में परिवर्तन होने की संभावना है।

सूचना - तिरुमल-तिरुपति घाट रोड से यात्रा करनेवाली मोटर घाडीवालें अपना वाहनों से संबंधित 'बार कोड रसीद' को स्कॉनिंग करना अनिवार्य है।

रथसप्तमी (१२.२.२०१९) के अवसर पर...

वन्देहम् - श्री सूर्यदेवम्

- श्री वेमुनूरि राजमौलि

वेदों से विदित होता है कि हमारे तैंतीस करोड़ देवता हैं। सभी में यह कामना बनी रहती है कि हम देवताओं को देखें और उन दैवीय-शक्तियों को प्राप्त करें। पुराने काल में जन्मों के जन्म, सहस्राब्द, शताब्द, दशाब्द, संवत्सरों के संवत्सर अकुंठित लगन के साथ तप करके उन देवताओं तथा तपश्शक्तियों को प्रसन्न कर लेने का विषय हमें श्रुति-स्मृतियों में दिखायी पड़ता है। इस कलियुग में बिना किसी प्रकार के जप व तप के ही प्राणियों को जगाकर सदा साथ देने वाले प्रत्यक्ष दैव श्री सूर्यनारायण मूर्ति हैं।

''सूर्य आत्मा जगतस्त स्थुषश्च'' - सूर्य भगवान इस जगत की आत्मा हैं, ऐसा श्रुति-वचन है। इतना ही नहीं, आदित्योपासना के विषय में ''आदित्यो वा एषयेतन्मण्डलं तपति'' के मन्त्र में दिखायी देने वाला पूरा आदित्य-मण्डल ऋग्वेद-स्थान है। उसमें ऋगभिमान देवताएँ रहते हैं- इससे हमें ऐसा ज्ञात होता है। उस मंडल में जो ज्वालाएँ होती हैं, वे सभी साम हैं- ऐसा हमको पहचानना है।'' वे ज्वालाएँ ही सामाभिमान देवताएँ हैं। ज्वालान्तर्गत-पुरुष रहने का स्थान, यजुरभिमान देवताओं का स्थान है। इस प्रकार वह मण्डल, तत्ज्वाला, ज्वालन्तर्ग-पुरुष को मिलाकर, ऋक्साम यजुरात्मक त्रयी विद्या के स्वरूप में पूरा आदित्य-मंडल प्रकाशित होता है।

आदित्य-मंडलाधिष्ठित देवता-मूर्ति ही हिरण्मय हो सारे लोकों को तेजोमय बना रहा है। क्या देवताएँ हैं? ऐसा सन्देह व्यक्त करने वालों के लिए श्री सूर्यनारायण ही प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। क्योंकि, यदि एक दिन सूर्योदय न हो जाय तो समस्त लोक व लोकान्तर्गत प्राणियों की हालत क्या होगी? आज के सभी लोगों को मालूम ही है। श्रुति का यह भी कथन है कि किसी समय आदित्य प्रकाशमान नहीं थे; तब सभी देवताओं ने मिलकर प्रायश्चित्तपूर्वक यज्ञ सम्पन्न किया और तब से आदित्य पूर्व की भाँति प्रकाशित होने लगे। यदि हम भी तेजस्कामी, यशस्कामी, ब्रह्मवर्चस्कामी बनना चाहेंगे, तो देवताओं ने जिस यज्ञ कर्म का अनुष्ठान किया, उस यज्ञ कर्म का निर्वहण करना चाहिए; ऐसा श्रुति का निर्देश है। हमारे प्रत्येक काम का साक्षीभूत हो कर्म-साक्षी के रूप में सूर्य भगवान प्रकाशित हो रहे हैं।

सूर्योदय के बाद, एक दिन गुजरता है तो हमारी आयु में से एक दिन घटता है। घटित आयु को बढ़ाने के लिए सूर्यनारायण मूर्ति की आराधना करने की पद्धति अनादिकाल से आचरण में है। आदित्यपंचायतन के अनुसार आदित्य को प्रधान देवता मानकर, बीच में स्थापित करके शेष, अंबिका, विष्णु, गणनाथ और महेश्वर को परिवार देवताओं के रूप में स्थापित कर, अर्चना करने की पद्धति को आदित्यपंचायतन, सौरोपासना कहते हैं। पूर्व काल में सौरोपासना पद्धति का आचरण बहुत था। सौरोपासकों का विश्वास है कि ''देव यानी सूर्य ही हैं; सभी उपासनाओं में से सौरोपासना ही श्रेष्ठ उपासना है। सूर्य के कारण ही सारे जगत का जन्म हो रहा है; उनके द्वारा उद्भूत जगत का निर्वाह हो रहा है; उसी सूर्य भगवान में सारे जगत का लय भी हो रहा है।''

आदित्यहृदय में सूर्य भगवान का नाम ''सर्वदेवात्माकोह्येशः'' है। सूर्यनारायण ही आत्मा के रूप में तेज स्वरूप हो विलसित है। ''आरोग्यं भास्करादिच्चेत'' की आर्योक्ति के अनुसार हमें नीरोगी बन, अनारोग्य-लक्षणों से दूर हो जीवन-यापन करने के लिए भगवान भास्कर की पूजा करनी चाहिए।

सर्व व्रत विधानाश्च सर्व देवाभि पूजनात्।
व्याधिं विनाशाय क्षिप्रं भास्कराय नमोस्तुते।।

''हे देव देव! तुम सर्व स्वरूप हो; तुम सर्व देवता स्वरूप हो; सर्व देवता द्वारा पूजनीय हो। हे स्वामी! कृपा करके हमारी व्याधियों को दूर करो; हम सदा साष्टांग नमस्कार समर्पित करते हैं - ऐसा यह श्लोक भी श्री सूर्यनारायण के प्रति सर्वज्ञत्व, व्याधि हरणत्व को प्रकट करता है। यह सूर्य भगवान व्याधि हरण ही नहीं करता, पितृ देवताओं के अशीश, अधिकारियों का अनुग्रह भी प्राप्त होता है। उत्तरायण-पुण्यकाल में तो सूर्य भगवान का ऊहातीत अनुग्रह प्राप्त होता है। शौच आदि से निवृत्त हो, परिशुद्ध हो, सूर्य भगवान को प्रणाम करने की (हो सके तो बारह नमस्कार) आदत आज भी देखी जाती है।

ब्रह्म स्वरूपमुदये मध्याह्नेतु महेश्वरम्।
सायं ध्यायेत् सदा विष्णुं त्रिमूर्तिंच दिवाकरम्।।

सुबह के समय ब्रह्म स्वरूप; मध्याह्न काल में महेश्वर स्वरूप; सायंकाल में विष्णु स्वरूप तथा दिन भर त्रिमूर्ति स्वरूप मान कर सूर्य भगवान का ध्यान करना चाहिए, ऐसा इस श्लोक का भावार्थ है। ब्राह्मणादि त्रिवर्ण, त्रिकालों में जिस अर्घ्य प्रदान का आचरण करते हैं, वह पूरा, इस सूर्य भगवान के लिए ही है। जब सूर्य मकर राशि में प्रवेश करता है; तब मकर संक्रमण होता है।

उस दिन से उत्तरायण-गमन प्रारंभ होता है। ऐसे समय में चन्द्रमान के अनुसार जब माघ-मास आता है, तब वह काल पुण्यप्रद माना जाता है। नदी-स्नान करने पर बहुत विशिष्ट फल प्राप्त होता है। माघ-मास के अवसर पर प्रातः के समय जो नदी-स्नान करते हैं; वे समस्त पापों से विमुक्त हो जाते हैं। जन्मांतर में मोक्ष प्राप्त करते हैं; ये माघ-पुराणोक्तियाँ हैं। सुबह ही जो नदी के प्रवाह में अथवा सरोवर में या किसी नाले में वा कुआँ आदि में, अन्त में गोपाद डुबकी लगाने भर के पानी में स्नान करके सूर्य भगवान को प्रणाम करके यथा शक्ति दान-धर्म करके भक्ति व श्रद्धा के साथ धूप, दीप, नैवेद्य समर्पित करके सूर्यनारायण मूर्ति की आराधना करता है, उसे मिलने वाला पुण्य अनन्त होता है।

बताने का एक और विषय यह है कि जिनमें योग्यता है, यदि वे अर्घ्य आदि का आचरण नहीं करते तो सूर्यनारायण अपना गमन निर्बाधगति से नहीं चला सकते; ऐसा शास्त्र बताता है। योग्यता रखने वालों को चाहिए कि वे प्रतिदिन त्रिच, सौरं, अरुण सहित नमस्कार तथा उसका पारायण, भास्कर गायत्री और प्रति नित्य अर्क समिधाओं से अरुण होम संपन्न करें। आदित्यहृदय, सूर्याष्टक, सूर्यसहस्त्रोत्तर शतनामावलि, सूर्याराधना करने वाले सभी लोग पद्मिनी, ऊषा, छाया, संज्ञा समेत श्री सूर्यनारायण मूर्ति का अनुग्रह प्राप्त करके आयुरारोग्य, ऐश्वर्य, अधिकार-प्रभाव, आशीशानुग्रह-परंपरा तथा समस्त देवताओं के आशिशों से वर्धित होते हैं।

माघ-मास भर में जो सूर्यनारायण मूर्ति की अर्चना करने में अशक्त होता है, वह उस मास में आनेवाले रविवारों में भी सूर्याराधना कर सकता है। इसके लिए भी यदि कोई अशक्त हो तो कम से कम माघ-शुक्ल सप्तमी (रथसप्तमी) के दिन प्रत्यक्ष दैव आदित्य देव की आराधना करके उनके कृपा का पात्र बन सकता है। सूर्याराधना करने पर नवग्रहों के कारण घटित होनेवाली प्रतिकूलताओं तथा उनके दोषों का निवारण होता है। ''सप्त दोषं रविर्हन्यात् विशेषात् उत्तरायणे;'' यह ज्योतिष शास्त्र का वचन है। सूर्य के उत्तरायण-गमन के माघ-मास में श्री सूर्यनारायण की आराधना करने पर सकल ग्रह दोषों का हरण होता है तथा उनका अनुग्रह प्राप्त होता है।

अतः यदि सूर्यदेव का अनुग्रह, आयुरारोग्य, अधिकारियों से प्रशंसा, नौकरी में वृद्धि, घर-बाहर में कीर्ति, नवग्रहों का अनुग्रह प्राप्त करना चाहें, तो अवश्य माघ-मास में परम पवित्र माघ-स्नान करके परिपूर्ण रूप से शुद्ध हो जगदात्मक, सर्व देवात्मक सूर्य भगवान की आराधना अवश्य करनी चाहिए।

ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

तेलुगु मूल - श्री गोल्लपल्लि वेंकटराम सुब्रह्मण्य घनापाठी।

साभार - आराधना, धार्मिक मासिक-पत्रिका।

भीष्म एकादशी

- श्रीमती प्रीति ज्योतीन्द्र अजवालिया

श्रीवैष्णव संप्रदाय में एकादशी व्रत का अधिक महत्व रहा है। वैष्णवों का सबसे प्रिय उत्सव एकादशी ही है। पूरे वर्ष में २४ एकादशी व्रत रहते हैं। इस एकादशी व्रत को रखकर, श्रीवैष्णवजन धन्यता और शरणागति प्राप्त करते हैं।

भगवान श्रीकृष्ण ने हर एक एकादशी का विशेष माहात्म्य धर्मराज युधिष्ठिर को बताया है। हर एक एकादशी मोक्षदायिनी और पुण्यदायिनी है। आज हम यहाँ भीष्म एकादशी (जया एकादशी) के माहात्म्य की जानकारी प्राप्त करेंगे।

माघ शुक्ल एकादशी का नाम 'जया एकादशी' है। उसे 'भीष्म एकादशी' भी कहा जाता है। यह एकादशी सर्व पापनाशिनी, कामदा और मोक्षदा है। यह एकादशी ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त करती है। पिशाच तत्व को भी मुक्त करती है।

शास्त्र में वर्णन है उस तरह जब कुरुक्षेत्र युद्ध विराम होने के बाद भीष्म पितामह बाणशैय्या पर लेटे थे। भीष्म को इच्छा मृत्यु का वरदान था, अपने प्राण त्यागने से पहले युधिष्ठिर भीष्म के पास आये और ज्ञान संपादन के लिए प्रार्थना की, तब भीष्म ने परमतत्व श्रीहरि विष्णु भगवान ही है और उनकी सेवा भक्ति ही मुख्य उपाय है। सेवा भक्ति से भक्त को शरणागत मिलती है, यही उसका फल है। ऐसा ज्ञान बताते हुए श्रीविष्णु का सहस्रनाम बताया इस पवित्र दिन माघ मास की शुक्ल जया एकादशी का दिन ''भीष्म एकादशी'' भी कहते है।

भीष्म एकादशी (१६.०२.२०१९) के संदर्भ में...

''भीष्म एकादशी यानी श्रीविष्णुसहस्रनाम जन्म जयंती''

भीष्म एकादशी महोत्सव दक्षिण भारत में विशेष रूप से आन्ध्र प्रदेश में मनाया जाता है। भीष्म एकादशी नाम आन्ध्र में ही जयादातर प्रचलित है। माघ मास की शुक्ल एकादशी (जनवरी, फरवरी) में मनाया जाता है। इस महोत्सव में प्रथम श्री विष्णु भगवान और साथ में भीष्म की विशेष पूजा करते है।

भीष्म एकादशी व्रत भीष्म को समर्पित करते हुए आन्ध्र प्रदेश के पूर्वी गोदावरी जिले में स्थित अंतर्वेदी लक्ष्मी नरसिंह स्वामी मंदिर में ये उत्सव बडी धूमधाम से मनाये जाते है। भीष्म एकादशी पर्व यहाँ की प्रमुख और महत्व पूर्ण घटना है। इस त्योहार के समारोह के दौरान, नरसिंह स्वामी कल्याणोत्सव (भगवान नरसिंह और देवी लक्ष्मी का दिव्य लग्न समारोह) दशमी तिथि के दिन मनाया जाता है और भीष्म एकादशी के दिन दिव्य रथयात्रा का आयोजन होता है।

इस दिन ब्राह्मणों-क्षत्रियों और श्रीवैष्णवों के द्वारा उपवास किया जाता है, वे लोग भीष्म के लिए पूजा करते है और द्वादशी के दिन पारायण करते है और दावत भी देते है। विशेष में सभी वैष्णव भीष्म की भी पूजा-अर्चना करते है।

माघ शुक्ल एकादशी का माहात्म्य-श्रीकृष्ण के मुख से...

भगवान श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को इस 'जया एकादशी' के पवित्र माहात्म्य के बारे में बताया। यह कथा पद्मपुराण में वर्णित है।

स्वर्ग में इन्द्र का शासन चल रहा था। इन्द्र देव अनेक अप्सराओं के साथ विध विध क्रीड़ाओं में प्रवृत था। एक दिन महानृत्य महोत्सव का आयोजन स्वर्ग में हुआ। अनेकानेक अप्सराओं के साथ इन्द्र ने भी रमणीय नृत्य किया। नृत्य महोत्सव में पुष्पदंत, चित्रसेन और उनके पुत्र पुष्पवान भी मधुर गान कर रहे थे। चित्रसेन के पुत्र पुष्पवान और उनके पुत्र माल्यवान थे। माल्यवान पर पुष्पवती नाम की गंधर्व कन्या ने आसक्त होकर माल्यवान को अपने वश में किया। पुष्पवती बहुत ही सुंदर कन्या थी, उसका वदन चंद्र समान गौर, नयन अतिसुंदर, कुंडलों से सुशोभित कर्ण, गले में अलंकृत दिव्य माला, हेमकुंभ जैसे दोनों उरज, पतली सी कमर, नितंब विपुल और जघन विस्तृत थे, इस मोहिनी पर माल्यवान संपूर्ण रूप से सम्मोहित थे। दोनों, एक दूसरे में लीन थे। इसकी वजह से इन्द्र के नृत्यगान में बाधा हुई। देवराज इन्द्र ने दोनों को शाप दिया। शाप की वजह से दोनों ने मृत्युलोक में पिशाच योनि में हिमालय पर्वत पर अवतरण किया।

पिशाच योनि में बहुत शोक थे, बहुत दुःख, कष्ट सहन कर रहे थे, जो व्याकुल थे। देह जलता था, निंदा चल बसी थी, नरक से भी ज्यादा कष्ट यहाँ पिशाच योनि में भोग रहे थे।

इन दिनों के दौरान माघ शुक्ल एकादशी की पवित्र तिथि आयी, यह तिथि 'जया' नाम से प्रचलित है। इस दिन दोनों ने देवयोग एक फण जीव हिंसा नही की, फल, पान, फूल इत्यादि का भी त्याग किया, जल का भी त्याग किया और पूरे दिन पीपल की छाया में बिता दिया इतने में सूर्यास्त हो गया, ठंड भी जोर से लगने लगी। इनको न तो रतिसुख मिला, नही सोने के लिये जगह ठंडा के प्रकोप से पूरी रात जागरण हुआ और ब्रह्मचर्य भी हो गया। अनायस ही 'जया एकादशी' का व्रत का पालन भी हो गया।

जया एकादशी (भीष्म एकादशी) व्रत की फलश्रुति

दूसरे दिन, द्वादशी की सुबह हुई, उसने नित्यकर्म किया, जलपान किया, एकादशी व्रत से पिशाचयोनि में से मुक्त होकर पूर्व की भांति दिव्य स्वरूप प्राप्त किया। इन्द्र लोक से विमान आया, विमान में बैठकर, दोनों, हास्य विनोद करते करते इन्द्रलोक चले गये। इन्द्रलोक में इन्द्रदेव ने पिशाच मुक्ति का विधान पूछा। तब माल्यवान और पुष्पवती ने बताया कि 'जया एकादशी' व्रत के उपवास से हम दोनों को पिशाचयोनि से मुक्ति मिली।

इन्द्रदेव ने दोनों को नमस्कार किया और इन्द्र लोक में बडा स्वागत सम्मान किया।

यह कथा भगवान श्रीकृष्ण युधिष्ठिर को बताते हैं और विशेष में कहते हैं कि, इस एकादशी के व्रत से ब्रह्महत्या पाप से भी मुक्ति मिलती है। जन्म-जन्मों तक श्रीवैष्णव वैकुंठ में निवास करते हैं। एकादशी व्रत करने से अग्निष्ट होम करने जैसा का फल प्राप्त होता है।

इस तरह कोई भी श्रीवैष्णव, कोई भी जीवात्मा, माघ शुक्ल भीष्म एकादशी के पवित्र दिन को, श्रीमन्नानारायण की विशेष पूजा, भीष्म की पूजा, श्रीविष्णुसहस्त्रनाम का पाठ, नाम स्मरण और उनके साथ-साथ एकादशी का उपवास और फलाहार व्रत रखता है, उसके फल स्वरूप श्रीवैष्णव अंत में वैकुंठ को प्राप्त करके मोक्ष प्रदान करता है।

तो आइये हम सब वैकुंठ प्राप्ति के लिये भीष्म एकादशी व्रत को करने का संकल्प करें...

जय श्रीमन्नारायण

श्री कुलशेखर स्वामीजी

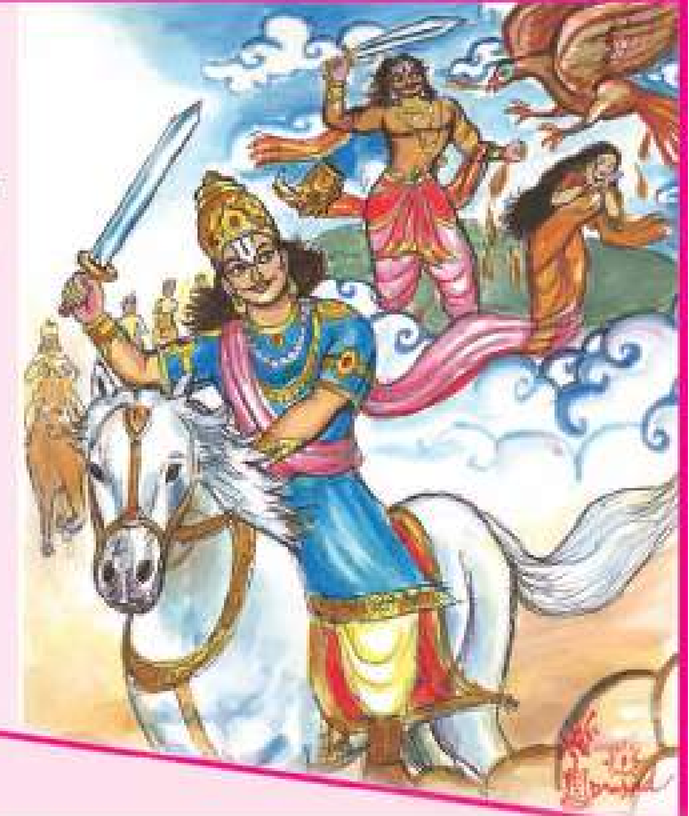

- श्रीमती शिल्पा केशव रांदड

जन्मक्षत्र - माघ मास, पुनर्वसु नक्षत्र
अवतार स्थल - तिरुवंजिक्कलम
आचार्य - श्री विष्वक्सेनजी
ग्रन्थ रचना - मुकुंद माला, पेरुमाळ तिरुमोळि
परमपद स्थल - मन्नार कोयिल (तिरुनेल्वेलि के पास)

तनियन

कुम्भे पुनर्वसौ जातं केरले चोलपट्टने।
कौस्तुभांशं धराधीशं कुलशेखरमाश्रये।।
घुष्यते यस्य नगरे रङ्गयात्रा दिने दिने।
तमहं शिरसा वन्दे राजानं कुलशेखरम्।।

जैसे राजा दशरथ के घर में भगवान श्रीराम का अवतार हुआ, वैसे ही राजा दृडव्रत के घर में माघ मास के शुक्ल पक्ष में पुनर्वसु नक्षत्र को भगवान के कौस्तुभ मणि के अंशरूप महात्मा कुलशेखर का अवतार हुआ। राजा ने अपने कुलभूषण अमित तेजस्वी बालक का नाम कुलशेखर रखा। इस बालक ने सभी विद्याओं का अध्ययन किया और पिता के आदेशानुसार राज्य सिंहासन पर प्रतिष्ठित हुए। भगवान श्रीराम ने जिस प्रकार पृथ्वी पर शासन किया था, उसी प्रकार धर्मपूर्वक राजा कुलशेखर अपना राज्यकार्य चलाने लगे।

वार्षिक तिरुनक्षत्र (१७.२.२०१९) के संदर्भ में...

भोगविभूति और लीलाविभूति के निर्वाहक करुणासागर भगवान ने अपने अहैतुक कृपावेश के कारण राजा कुलशेखर के लिये तमोगुण को छोड़कर एकमात्र सत्वगुण प्रधान ज्ञान उनको प्रदान किया। भगवान का अनुशासन प्राप्त करके पृथ्वी पर अवतरित श्रीविष्वक्सेनजी ने राजा कुलशेखर को पंचसंस्कारों से संस्कृत किया। जिस प्रकार अग्नि की ज्वाला में प्रवेश कर उसमें निवास करना आत्मा के लिये सर्वथा दु:सह है, उसी प्रकार भगवान के दासस्वरूप एवं श्रीहरि में संलग्न मेरे लिये सांसारिक मनुष्यों के साथ रहना भी अत्यन्त दु:सह है। महात्मा कुलशेखर ने ऐसा निश्चय करके देह की ममता में बंधे हुए मनुष्यों का साथ छोड़कर भगवान के अधीन रहनेवाले राज्य को उनके कैंकर्य में उपयोगी बनाया और फिर स्वयं भगवान श्रीराम की शरणागति प्राप्त की।

भगवान श्रीमन्नारायण के अर्चावतारों में श्री वेंकटेशजी तथा विभवशालियों में भगवान श्रीराम के विषय में राजा कुलशेखर की भक्ति अपूर्व थी। उन्होंने श्री वेंकटेश भगवान से सेवापूर्वक यह प्रार्थना की कि - ''हे नाथ! आपके मंदिर में सोपान बनकर रहूँ।''

श्री कुलशेखर स्वामीजी सदैव महात्मा श्रीवैष्णवों से भगवान का गुणानुवाद सुनते थे। एक बार भगवान श्रीरंगनाथ के नित्य निवास श्रीरंगक्षेत्र की महिमा को सुनकर राजा कुलशेखर ने श्रीरंगधाम की यात्रा करने का निश्चय किया और मन में विचार करने लगे कि - पुत्र, धन, परिवार, प्राकृतिक वस्तुएँ अनित्य हैं। इसलिये मुझे अब श्रीरंगपुरी में भगवान श्रीरंगनाथ की नित्य सौख्य प्रदान करने वाली सेवा करनी चाहिये। ऐसा निश्चय करके उन्होंने श्रीरंगधाम जाकर श्रीरंगनाथ भगवान का कैंकर्य और वहाँ पर स्थायी निवास की घोषणा कर दी। इस घोषणा से उनके मंत्रियों ने दु:खित होकर श्रीवैष्णवों से उन्हें यह यात्रा स्थगित करने की प्रार्थना की।

मंत्रियों की प्रार्थना सुनकर श्रीवैष्णव महात्मा जिस समय राजा की यात्रा के लिये प्रस्थान करने वाले थे, उस समय वे सभी उनके सामने आये और राजा द्वारा साष्टांग प्रणाम करने के पश्चात् शुभाशीर्वाद दिया। राजा ने सोचा - ''श्रीवैष्णव भागवतों का कैंकर्य करना ही सबसे बड़ा पुरुषार्थ है।'' और भगवत सेवा का माहात्म्य जानने वाले राजा कुलशेखर ने अपनी श्रीरंग यात्रा का विचार स्थगित कर दिया और उन समस्त श्रीवैष्णवों को साथ लेकर अपने राजप्रासाद में वापस आ गये। वापस आकर श्रीवैष्णवों का उचित सत्कार और तदियाराधना की।

इस प्रकार मंत्रियों के द्वारा प्रेरित प्रतिदिन आनेवाले श्रीवैष्णवों के स्वागत एवं सेवा में व्यस्त रहनेवाले राजा कुलशेखर की श्रीरंगयात्रा प्रतिदिन रुकती चली गयी और श्रीवैष्णवों का कैंकर्य करते हुए उनके अधीन रहकर बहुत समय तक राज्य कर अपनी प्रजा का पुत्रवत पालन किया।

एक समय में धर्मात्मा राजा कुलशेखर ने श्रीवैष्णव के मुख से श्री वेंकटाचल का माहात्म्य सुनकर लोक कल्याण के लिये ''मुकुन्द माला'' स्तोत्र की रचना की।

श्री वाल्मीकि रामायण में भगवान श्रीराम का पावन चरित्र सुनकर महात्मा कुलशेखर, भगवान राम के चरणारविन्दों में भक्तिमान हो गये और प्रतिदिन रामायण की कथा श्रवण करने में अपना समय बिताने लगे। एक समय कथा सुनते सनुते अरण्य काण्ड में खरदूषण के साथ जब भगवान राम युद्ध का प्रसंग आया तब चौदह हजार राक्षसों की विशाल सेना और उनके सन्मुख अकेले भगवान राम को खड़े सुनकर राजा कुलशेखर क्रोधित हो उठे और तत्काल भगवान श्रीराम के प्रेम में लीन होकर चतुरंगी सेना को साथ लेकर भगवान राम की सहायता के लिये शीघ्र चलने का निश्चय किया। राजा के इस असामयिक निर्णय को समझकर, भगवान श्रीराम द्वारा विशाल सेना का विनाश और उनके विजय का वृत्तांत सुनाया। उक्त विजय के पावन प्रसंग को सुनकर रामभक्त राजा कुलशेखर ने अपनी सेना को लौट आने का आदेश दिया।

राजर्षि कुलशेखर को भगवान श्रीराम एवं श्रीवैष्णवों के प्रति अनन्य भक्ति थी। इनकी भक्ति अतुलनीय थी और इसलिए वे हरिभक्तों के पराधीन थे। उनकी सन्निधि में सदा श्रीवैष्णव रहते थे। यदि उनके समीप कोई वैष्णवेतर भक्त आ भी जाते तो कुलशेखर जी के प्रभाव से वे तत्काल श्रीवैष्णव बन जाते।

एक बार आवश्यक कार्य में संलग्न होने के कारण राज पुरोहित कथा सुनाने के लिये नहीं आये और इसलिए अपने पुत्र को भेज दिया। राजा कुलशेखर के राम भक्ति से अपरिचित होने के कारण उन्होंने सीता हरण की कथा विस्तार के साथ सुनाना प्रारम्भ किया। माता सीता को कष्ट में देखकर लंकापुरी और रावण को नष्ट करने के लिये सेना के साथ स्वयं तलवार और धनुष बाण लेकर आगे बढते हुए समुद्र में प्रवेश कर लंका की ओर बढ़ने लगे। भक्ताधीन करुणा सागर भगवान श्रीराम अपने भक्त की यह अद्भुत लीला को देखकर तत्काल उनके सम्मुख प्रगट हो गये और कहने लगे कि - ''हे पुत्र! मेरे रहते हुए तुमने ऐसा श्रम उठाया, यह तुम्हारे लिये उचित नहीं है। मैं युद्ध में रावण का विनाश करके जानकी को वापस ले आया हूँ।'' यह

कहकर भगवान श्रीराम ने जानकीजी को उनके समक्ष उपस्थित कर दिया। राम, लक्ष्मण और माता सीता के दर्शन कर राजा कुलशेखर बहुत प्रसन्न हुए और सेना सहित भगवान के साथ अपने नगर की ओर प्रस्थान किया। बाद में भगवान अंतर्धान हुए। भगवान को न देखकर अत्यन्त दुःखित हुए परन्तु क्षण भर में संपूर्ण परिस्थिति को समझकर सेना सहित नगर में आ गये।

श्री कुलशेखर स्वामीजी अपना समस्त राजपाठ श्रीवैष्णव महात्माओं के ही अधीन करके स्वयं तो भगवद भागवत आचार्य के दास स्वरूप बनकर उनका गुणानुभाव करते हुये ही अपना समय व्यतीत करते थे। मंत्रियों ने देखा कि स्वामीजी भोजन, सोते समय सदैव श्रीवैष्णवों से ही घिरे रहते हैं और वे प्रजा का पालन करने में असमर्थ हो रहे है तब मंत्रियों ने एक योजना बनाई। जब स्वामीजी स्नान के लिये जाते समय अपने आभूषण वही सिंहासन पर रख कर चले गये तब उन्होंने आभूषणों की चोरी की। तदियाराधन के बाद आभूषण वहा पर न दीखने पर उसके बारे में मंत्रियों से पूछा तो उन्होंने चोरी का इल्जाम श्रीवैष्णवों पर लगाया। मंत्रियों के मुख से श्रीवैष्णवों की निन्दा और उनके ऊपर मिथ्या आरोप के पापमय वचन सुनकर राजा कुलशेखर ने मन ही मन उनको दण्ड देने का निश्चय किया और कहा - ''संसार में जो भी पाप हैं, वह भगवान श्रीमन्नारायण के नामस्मरण से मिट जाते हैं और भगवान की निन्दा करने से जो पाप उत्पन्न होते हैं, वो श्रीवैष्णव महात्माओं की स्तुति करने से नष्ट हो जाते हैं। किन्तु श्रीवैष्णवों की निन्दा करने से जो पाप उत्पन्न होते हैं, वे किसी भी यत्न से कथही नहीं मिटते। अतः श्रीवैष्णवों की जो तुम लोगों ने निन्दा की है, उस अपराध के कारण आज मैं तुम लोगों को दण्ड देता हूँ।'' और श्रीवैष्णव की निर्मलता को प्रमाणित करने के लिये राजा कुलशेखर ने एक भयंकर सर्प को मिट्टी के घड़े में रखकर राज्य सभा में मंगवाया और सबको संबोधित करते हुए कहा- ''श्रीवैष्णव महात्मा मुक्ति और भुक्ति से निष्पृह हैं, वे चोर कदापि नहीं है। इस बात को अब मैं आपके सन्मुख सत्य प्रमाणित कर रहा हूँ। यदि वे महात्मा निर्दोष हैं, तो यह विषैला सर्प मुझे नहीं डसेगा।'' ऐसा कह उन्होंने घड़े का ढक्कन उठाकर अपना हाथ उसके अन्दर डाल दिया। राजा ने घड़े में रखे सर्प का अपने हाथों से बार बार स्पर्श किया, लेकिन उस विषैले सर्प ने राजा के हाथ को छुआ तक नहीं।

तत्पश्चात् सभी देवताओं के साथ भगवान श्रीराम वहाँ प्रगट हुए। भगवान ने अपने कृपा कटाक्ष से राजा को देखते हुए उनसे कहा कि - ''राजन्! आपकी श्रीवैष्णव भागवत निष्ठा से अत्यन्त प्रसन्न हूँ।'' यह कहकर भगवान ने उन्हें प्रेमालिंगन किया और वर माँगने के लिये कहा। तब राजा ने हाथ जोड़कर भगवान से निवेदन किया कि - 'हे प्रभो! आपकी पूर्ण कृपा से दास के पास किसी वस्तु की कमी नहीं है। फिर भी यदि आपकी वर प्रदान करने की इच्छा हो तो यही एकमात्र वर दीजिये कि दास की श्रद्धा भक्ति सदैव आपके चरणकमलों में बनी रहे।' भगवान ने श्री कुलशेखर स्वामीजी पर प्रसन्न होकर उन्हें वर प्रदान कर उनकी पुत्री के साथ पाणिग्रहण संस्कार कर अपने धाम लौट गये। इस अद्भुत चरित्र को देख मंत्रियों ने भयभीत होकर अपनी गलती को माना और आभूषण लौटा दिया।

मंत्रियों को क्षमा कर श्री स्वामीजी पुनः श्रीवैष्णव तदियाराधन में समय व्यस्त रहने लगे। एक बार राजा रामनवमी के पुण्य महोत्सव पर भगवान श्रीराम के तिरुमंजन अभिषेक की तैयारी में संलग्न थे। भगवान के सभी आभूषण उतार कर एक तरफ रख दिये थे। जब तिरुमंजन के बाद शृंगार का समय आया तो राजा कुलशेखर ने देखा कि भगवान का एक बहुमूल्य मोतियों का हार गायब है। जब बहुत खोज की गई तो मंत्रियों ने पुनः हार चुराने का आरोप श्रीवैष्णव महात्माओं पर लगाया। यह सुनते ही राजा ने फिर पहले के समान भागवत निन्दा को महान पाप बताते हुए भगवत कृपा से ऐसा चमत्कार दिखाया कि मंत्रियों ने

तत्काल ही हार लाकर उनके समक्ष रख दिया और अपने अपराधों के लिये क्षमा याचना की। इस घटना को देखकर उनके साथ रहना अब उचित नहीं है ऐसा मानकर राज्य का कार्यभार अपने पुत्र को सौंपकर स्वामीजी श्रीरंगम् चले गये। श्रीरंगनाथ भगवान के दर्शन कर आनंदित होकर उन्होंने 'पेरुमाल तिरुमोळि' नामक दिव्य प्रबन्ध की रचना की। जिसमें १०५ गाथाएँ और सात दिव्य देशों का मंगलाशासन है। इस ग्रंथ के चौथे दशक में श्री कुलशेखर स्वामीजी नानाविध जन्म पाने की प्रार्थना करते हैं, जैसे -

१. वेंकटाद्रि के पुष्करिणी में पक्षी का जन्म मांगते हैं।

२. परंतु पक्षी उड़ कर बाहर जा सकता हैं, इसीलिए मछली का जन्म मांगते हैं, जो बाहर नहीं जा सकती।

३. परंतु जल सूख सकता है, इसीलिए भगवान की सेवा में एक सोने का बर्तन पकड़ने वाले एक सेवक बन जाऊँ तो मंदिर में प्रवेश कर सकूँ।

४. परंतु सोने का बर्तन पकड़ने से मन में अहंकार पैदा हो सकता है और कदाचित अपचार के कारण उन्हें दूर कर सकता इसीलिए एक पेड़ का जन्म माँगते है।

५. परंतु एक निरुपयोगी पेड़ होने के कारण उखाड़ लिया जा सकता है इसीलिए एक पहाड़ का जन्म माँगते हैं जिसे दूर हटा नहीं सकते।

६. परंतु महल मंदिर बनाने वाले शिला के लिए पहाड़ तोड़ दिए जा सकते हैं, इसीलिए तिरुवेंकट पर्वत पर एक नदी होने के लिए प्रार्थना करते हैं।

७. परंतु नदी कभी भी सूख सकती है, इसीलिए सन्निधि का रास्ता बनने के लिए प्रार्थना करते हैं।

८. परंतु रास्ता बदला जा सकता है, इसीलिए सन्निधि में सीढ़ी का जन्म माँगते हैं, जो हमेशा स्वामी के सामने ही ठहरकर सदा भगवान के मुखारविंद के दर्शन करते रहे। इसी प्रार्थना के अनुसार श्री वेंकटाद्रि में भगवान के सामने रहने वाली सीढ़ी को कुलशेखर पडी कहते है। केवल श्री वेंकटाद्रि में ही नहीं परंतु सभी दिव्यदेशों में भगवान के सामने स्थित सीढ़ी को **'कुलशेखर पडी'** कहते हैं।

कुछ समय श्रीरंगम् में निवास करने के पश्चात् श्री कुलशेखर स्वामीजी ने समस्त श्रीवैष्णव मंडली के साथ दक्षिण के अनेकों दिव्य देशों की यात्रा और वहाँ स्थित भगवान का कैंकर्य करने के बाद कुरुका नगर के 'ब्रह्मदेश' नामक स्थान पर आये। यहाँ अधिष्ठाता श्री राजगोपाल भगवान को प्रणाम कर उनके वशीभूत हो ६७ वर्षों तक यहाँ सुख पूर्वक निवास किया। पाण्ड्यदेश स्थित इस ब्रह्मपुर नामक स्थान पर ही उन्होंने श्री राजगोपाल भगवान की सन्निधि में परमपद की प्राप्ति की।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

पाठकों केलिए सूचना

हर महीने सप्तगिरि मासिक पत्रिका आपको समय पर नहीं मिलता, तो आप प्रधान संपादक कार्यालय के कार्यरत समय में निम्न लिखित दूरभाष से संपर्क कर सकते हैं। पत्रिका तुरंत भेजा जायेगा।

आप फोन पर आपका चंदा नंबर, पता, अपने प्रांत का पोस्टल पिन कोड, मोबाइल नंबर सही ढंग से बताइये।

प्रधान संपादक कार्यालय का दूरभाष : ०८७७-२२६४५४३.

श्री धनुर्दास स्वामीजी

- श्रीमती शकुंतला उपाध्याय

जन्मनक्षत्र - माघ, आश्लेषा

अवतार स्थल - उरैयूर

आचार्य - श्री रामानुजस्वामीजी

परमपद प्राप्त स्थान - श्रीरंगम्

पिल्लै उरंगा विल्ली दासर एक महान पहलवान थे और अपनी पत्नी पोंन्नाच्चियार (हेमांबा) के साथ उरैयूर में रहते थे। वे अपनी पत्नी की सुंदरता (विशेषतः उनके सुंदर नेत्रों) की वजह से उनसे बहुत प्रेम करते थे। मूलतः उन्हें धनुर्दास नाम से जाना जाता है। वे बहुत धनी थे और उनकी बहादुरी के लिए राज्य में उनका बहुत सम्मान था।

एक बार श्री रामानुजस्वामीजी अपने शिष्यों के साथ मार्ग से जाते हुए देखते हैं कि धनुर्दास पोंन्नाच्चियार (हेमांबा) के आगे आगे एक हाथ में छाता लेकर उसे धूप से बचाते हुए और एक हाथ में उसके आराम के लिए जमीन पर कपड़ा लिए हुए उसके सामने चल रहे थे। श्री रामानुजस्वामीजी धनुर्दास के एक स्त्री के प्रति ऐसे लगाव को देखकर अचंभित रह जाते हैं और उन्हें अपने पास बुलाते हैं। श्री रामानुजस्वामीजी उनसे पूछते हैं कि वे उस स्त्री की ऐसी सेवा क्यों कर रहे हैं? धनुर्दास कहते हैं कि उसके नेत्र बहुत ही सुंदर हैं और वह उसकी सुंदरता के प्रति पूरी तरह से समर्पित हैं और उसकी रक्षा के लिए कुछ भी कर सकते हैं। श्री रामानुजस्वामीजी धनुर्दास से कहते हैं कि अगर वे उन्हें उनकी पत्नी के नेत्रों से भी सुंदर नेत्र दिखा दें तो क्या वे इसी तरह उनके समक्ष समर्पित हो जायेंगे और उनकी रक्षा करेंगे? धनुर्दास तुरंत उसे स्वीकार करते हैं और कहते हैं कि वे उन अत्यंत सुंदर तत्त्व को समर्पित हो जायेंगे। श्री रामानुजस्वामीजी उन्हें श्रीरंगनाथ भगवान के समक्ष ले जाते हैं और उनसे प्रार्थना करते हैं कि वे धनुर्दास को उन्हीं सुंदर नेत्रों का दर्शन करायें जो उन्होंने श्री परकालस्वामीजी को दिखाए थे। भगवान के नेत्र प्राकृतिक रूप से सबसे सुंदर हैं और उन्हें देखकर धनुर्दास को अनुभव होता है कि उन्हें वास्तविक सुंदरता मिल गयी है। वे तुरंत श्री रामानुजस्वामीजी के शरण में चले जाते हैं और उनसे उन्हें अपना शिष्य बनाने की प्रार्थना करते हैं। उनकी पत्नी भी भगवान और श्री रामानुजस्वामीजी की महानता को समझकर श्री रामानुजस्वामीजी के शरण हो जाती है और उनसे मार्गदर्शन की विनती करती है। दंपति अपने सारे व्यामोह छोड़कर श्रीरंगम् में निवास के लिए आ जाते हैं और श्री रामानुजस्वामीजी व भगवान के चरण कमलों की सेवा करने लगते हैं। भगवान, धनुर्दास पर बहुत कृपा करते हैं

वार्षिक तिरुनक्षत्र के संदर्भ में... (१८.०२.२०१९)

क्योंकि वे भगवान की सेवा पूजा लक्ष्मणजी के समान किया करते थे, जिन्होंने श्रीराम के वनवास के समय कभी नहीं सोये। वे ही श्री पिल्लै उरंगा विल्ली दासर नाम से प्रसिद्ध हुए।

श्री धनुर्दास स्वामीजी और पोंन्नाच्चियार (हेमांबा) का श्री रामानुजस्वामीजी से बहुत लगाव था। वे श्रीरंगम् में श्री रामानुजस्वामीजी और भगवान की सेवा करते हुए अपना जीवन व्यतीत करने लगे। एक बार नम्पेरुमाल के तीर्थवारि को (उत्सव के समापन दिवस पर), मंदिर की टंकी पर चढ़ते हुए श्री रामानुजस्वामीजी श्री धनुर्दास स्वामीजी का हाथ पकड़ते हैं। इस पर कुछ शिष्य सोचते हैं कि श्री रामानुजस्वामीजी जैसे सन्यासी के लिए धनुर्दास (उनके वर्ण के कारण) का हाथ पकड़ना ठीक नहीं है। वे सब इस बात को श्री रामानुजस्वामीजी के सामने रखते हैं और श्री रामानुज स्वामीजी एक सुंदर दृष्टांत द्वारा श्री धनुर्दास स्वामीजी और पोंन्नाच्चियार के गौरव को स्थापित करते हैं।

श्री रामानुजस्वामीजी उन शिष्यों को श्री धनुर्दास स्वामीजी के घर जाकर उनकी पत्नी के गहने चुराकर ले आने के लिए कहते हैं। वे सब श्री धनुर्दास स्वामीजी के घर जाते हैं और देखते हैं कि पोंन्नाच्चियार सो रही थी। वे चुपके से उनके पास जाते हैं और उनके शरीर पर जो भी गहने थे उन्हें उतारने का प्रयत्न करते हैं। पोंन्नाच्चियार यह जानकर कि ये श्रीवैष्णव कुछ चुराने की कोशिश कर रहे हैं और यह सोचकर कि वे ऐसा अपनी निर्धनता के कारण कर रहे हैं। वह उन्हें आसानी से गहने उतारने देती है। जब वे एक तरफ के गहने निकाल लेते हैं तो पोंन्नाच्चियार दूसरी तरफ के गहने उतारने के लिए करवट बदलती है, जिससे वे लोग आसानी से दूसरी ओर के गहने निकाल सके। परन्तु इससे वे लोग सतर्क हो जाते हैं और डरकर वहाँ से भाग जाते हैं और श्री रामानुज स्वामीजी के पास लौट आते हैं। इस दृष्टांत को सुनने के बाद श्री रामानुज स्वामीजी उन्हें श्री धनुर्दास स्वामीजी के घर जाकर वहाँ का हाल जानने को कहते हैं। वे वहाँ जाकर देखते हैं कि श्री धनुर्दास स्वामीजी घर पर आ गये और पोंन्नाच्चियार से बात कर रहे हैं। वे उनसे एक तरफ के गहने नहीं होने का कारण पूछते हैं। पोंन्नाच्चियार बताती है कुछ श्रीवैष्णव गहने चुराने के लिए आये थे और उन्होंने मुझे सोया हुआ जानकर एक तरफ के गहने उतार लिए तब मैंने दूसरी तरफ निकालने के लिए करवट ली पर वे चले गये।

यह जानकर श्री धनुर्दास स्वामीजी बहुत दुःखी होते हैं और पोंन्नाच्चियार से कहते हैं कि उन्हें पत्थर के समान लेटे रहना चाहिए था जिससे वे लोग जैसे चाहे गहने निकाल सकते थे और करवट बदलकर उन्होंने श्रीवैष्णवों को भयभीत कर दिया। वे दोनों ही इतने महान थे कि उनसे चोरी करने वालों की भी वे सहायता ही करना चाहते थे। सभी श्रीवैष्णव श्री रामानुज स्वामीजी के पास लौटते हैं और उन्हें पूरी घटना बताते हैं और उस दंपति की महानता स्वीकार करते हैं। अगली सुबह श्री रामानुज स्वामीजी सारी घटना श्री धनुर्दास स्वामीजी को बताते हैं और उनके गहने उन्हें लौटा देते हैं।

श्री धनुर्दास स्वामीजी श्री विदुरजी और श्री विष्णुचित्त स्वामीजी के समान भगवान के प्रति अपने अत्यंत लगाव के कारण ''महामती'' (अत्यंत विवेकशील) के नाम से प्रसिद्ध हुए। पूर्वाचार्यों की रचनाओं में कई दृष्टांतों में पोंन्नाच्चियार (हेमांबा) के निष्कर्ष दर्शाये गये हैं, जो बताते हैं कि उनको शास्त्रों में बहुत जानकारी थी।

पूर्वाचार्यों की रचनाओं में बहुत से स्थानों पर श्री धनुर्दास स्वामीजी और उनकी पत्नी से संबंधित कई वृत्तांत प्रस्तुत किये गये हैं।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

सूचना

लाइसेंस प्राप्त पिस्तोल और खतरनाक औजारों जैसे चीजों को मंदिर में ले जाना मना है।

- प्रजासंपर्काधिकारी, ति.ति.दे., तिरुपति।

उसे देखकर श्री कुरेश स्वामीजी श्री धनुर्दास स्वामीजी की बहुत प्रशंसा करते हैं। वे कहते हैं कि ''हम भागवत विषय का ज्ञान प्राप्त करके उसे दूसरों को समझाने का प्रयास करते हैं, परन्तु आप हमारे समान न होकर भगवान के ध्यान में भाव विभोर हो जाते हैं, आपका स्वभाव अत्यंत प्रशंसनीय है।'' श्री कुरेश स्वामीजी स्वयं भगवान के ध्यान में द्रवित हो जाया करते थे - यदि वे श्री धनुर्दास स्वामीजी के बारे में ऐसा कहते हैं तो हम उनकी महानता को समझ सकते हैं।

हम उनमें से कुछ यहाँ देखेंगे-

१. ६००० पद गुरुपरंपरा प्रभाव - एक बार श्री रामानुज स्वामीजी विभीषण की शरणागति पर व्याख्यान कर रहे थे। उस गोष्ठि में से श्री धनुर्दास स्वामीजी उठकर पूछते हैं ''अगर विभीषण (जिन्होंने सर्वस्व त्याग दिया) को स्वीकार करने के लिए श्रीराम लम्बे समय तक सुग्रीव और जांबवंत से विचार विमर्ष करते हैं, तो मैं जो परिवार के मोह में पड़ा हुआ हूँ, उसे मोक्ष की प्राप्ति कैसे होगी?'' श्री रामानुज स्वामीजी कहते हैं - ''अगर मुझे मोक्ष प्राप्त होगा तो तुम्हें भी होगा; अगर श्री महापूर्ण स्वामीजी को मोक्ष प्राप्त होगा तो मुझे भी होगा, अगर श्री यामुनाचार्य स्वामीजी को मोक्ष प्राप्त होगा तो महापूर्ण स्वामीजी को भी होगा; इस तरह यह कड़ी गुरुपरंपरा माला में ऊपर तक जाएगी। क्योंकि श्री शठकोप स्वामीजी ने घोषणा की है कि उन्हें मोक्ष प्राप्ति हुई है और क्योंकि श्री महालक्ष्मीजी इस बाबत् भगवान से हमारे लिए अनुशंसा करती है, हम सभी को मोक्ष की प्राप्ति होगी। जिन्हें भागवत शेषत्व प्राप्त है उनकी मुक्ति निश्चित है - जैसे वे चार राक्षस जो विभीषण के साथ आए थे जिन्हें श्रीराम ने विभीषण के संबंध से स्वतः ही संसार बंधन से छुड़ा दिया।''

२. पेरिय तिरुमोळी में - श्री पेरियवाच्चन पिळ्ळै की व्याख्यान - भगवान के प्रति श्री धनुर्दास स्वामीजी के महत्व को यहाँ दर्शाया गया है। श्रीरंगनाथ भगवान की सवारी के दौरान श्री धनुर्दास स्वामीजी, सावधानी से भगवान को देखते हुए उनके सन्मुख चला करते थे और अपने हाथों को तलवार पर रखते थे। यदि नम्पेरुमाल को जरा-सा भी झटका लग जावे तो वे तलवार से स्वयं को मार लेते (क्योंकि उन्होंने स्वयं को नहीं मारा, हम समझ सकते हैं कि वे नम्पेरुमाल को अत्यंत ध्यान से ले जाया करते थे)। इस विशेष महत्व के कारण, श्री धनुर्दास स्वामीजी को ''महामती'' कहते थे। यहाँ ज्ञानी/बुद्धिमान होने से आशय, भगवान के कल्याण के लिए चिंतित होने से है।

३. तिरुविरुत्तम - श्री कलिवैरिदास स्वामीजी का व्याख्यान - जब भी श्री कुरेश स्वामीजी श्रीसहस्रगीति का व्याख्यान आरम्भ करते थे, श्री धनुर्दास स्वामीजी बहुत भावुक हो जाते थे और श्रीकृष्ण चरित्र के आनंद में मग्न हो जाते थे। उसे देखकर श्री कुरेश स्वामीजी श्री धनुर्दास स्वामीजी की बहुत प्रशंसा करते हैं। वे कहते हैं कि ''हम भागवत विषय का ज्ञान प्राप्त करके उसे दूसरों को समझाने का प्रयास करते हैं, परन्तु आप हमारे समान न होकर भगवान के ध्यान में भाव विभोर हो जाते हैं, आपका स्वभाव अत्यंत प्रशंसनीय है।'' श्री कुरेश स्वामीजी स्वयं भगवान के ध्यान में द्रवित हो जाया करते थे - यदि वे श्री धनुर्दास स्वामीजी के बारे में ऐसा कहते हैं तो हम उनकी महानता को समझ सकते हैं।

४. तिरुविरुत्तम - श्री कलिवैरिदास स्वामीजी का स्वउपदेश - एक बार श्री रामानुज स्वामीजी श्रीरंगम् से तिरुमल जाना चाहते थे। उस समय वे एक श्रीवैष्णव को भण्डार से (जिसे श्री धनुर्दास स्वामीजी नियंत्रित करते हैं) कुछ चावल लाने के लिए भेजते हैं। जब श्री धनुर्दास स्वामीजी को श्री रामानुज स्वामीजी के श्रीरंगम् से जाने की योजना के बारे में ज्ञात होता है, वे भण्डार में जाकर अत्यंत दुःखी होकर रोने लगते हैं। इससे उनके श्री रामानुज स्वामीजी के प्रति लगाव का पता चलता है। वह श्रीवैष्णव श्री

रामानुज स्वामीजी के पास लौटकर उन्हें पूरी घटना बताते हैं और श्री धनुर्दास स्वामीजी का भाव समझकर श्री रामानुज स्वामीजी से कहते हैं कि वे भी श्री धनुर्दास स्वामीजी से वियोग नहीं सह सकते।

५. श्रीसहस्रगीति - श्री कलिवैरिदास स्वामीजी का व्याख्यान - एक बार श्री धनुर्दास स्वामीजी के दो भतीजे (जिनके नाम वंदर और चोंदर थे) राजा के साथ जाते हैं। राजा उन्हें एक जैन मंदिर को दिखाकर, उसे विष्णु भगवान का मंदिर बताते हुए उन्हें वहाँ प्रणाम करने को कहता है। वास्तुकला में समानता देखकर वे तुरंत उसे प्रणाम करते हैं परंतु फिर राजा उन्हें बताता है कि वह सिर्फ उन्हें सता रहा था और यह एक जैन मंदिर है। वंदर और चोंदर यह जानकर कि उन्होंने श्रीमन्नारायण भगवान के अतिरिक्त किसी और को प्रणाम किया है, तुरंत बेहोश हो जाते हैं। श्री धनुर्दास स्वामीजी यह वृत्तांत सुनकर उनके पास दौड़ते हुए आते हैं और उन्हें अपने चरणों की धूल लगाते हैं जिससे वे तुरंत पुनः होश में आ जाते हैं। यह दर्शाता है कि भागवतों के चरण कमल की धूल ही देवान्तर (भले ही अनजाने में किया गया) भजन का एक मात्र उपाय है।

बहुत से दृष्टांतों में श्री धनुर्दास स्वामीजी का कृष्ण भगवान के प्रति लगाव दर्शाया गया है-

१. तिरुविरुत्तम - श्री पेरियवाच्चन पिळ्ळै का व्याख्यान- एक बार एक ग्वाल बाल राजा के लिए ले जा रहे दूध को चुरा लेता है और राजा के सिपाही उसकी पिटाई करते हैं। वह देखकर श्री धनुर्दास स्वामीजी उस ग्वाल बाल को कृष्ण समझकर, उन सिपाहियों के पास जाते हैं और उनसे कहते हैं कि वे उस ग्वाल बाल को छोड़ दे और उसके अपराध का जो भी दंड है वह उन्हें दें।

२. नाच्चियार तिरुमोळि - श्री पेरियवाच्चन पिळ्ळै का व्याख्यान - श्री धनुर्दास स्वामीजी कहते हैं ''क्योंकि कृष्णजी बहुत छोटे हैं, वे स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर सकते। उनके

श्री धनुर्दास स्वामीजी अपने अंतिम दिनों में सभी श्रीवैष्णवों को आमंत्रित करते हैं, तदियाराधन कराते हैं और उनका श्रीपाद तीर्थ ग्रहण करते हैं। वे पोंन्नाच्चियार को बताते हैं कि वे परमपद की ओर प्रस्थान करेंगे और पोंन्नाच्चियार को यही कैंकर्य करना है। श्री रामानुज स्वामीजी की पादुकायें अपने मस्तक पर रखकर, वे अपनी चरम तिरुमेनी का त्याग करते हैं। श्रीवैष्णव उनकी अंतिम यात्रा की तैयारी करते हैं, कावेरी नदी का जल लाकर उन्हें ऊर्ध्वपुण्ड्र से सुशोभित करते हैं।

माता-पिता भी बहुत ही नरम स्वभाव के हैं और उनकी रक्षा नहीं कर सकते क्योंकि वे स्वयं कारागार में बंद हैं। कंस और उसके साथी निरंतर उन्हें मारने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। केवल अँधेरी रात ने ही (जिसमें कृष्णजी का जन्म हुआ) उन्हें संरक्षित किया है। इसलिए हम मिलकर अंधेरी रात की प्रशंसा करे जिसने भगवान की रक्षा की।

२. पेरियाळ्वार तिरुमोळि २.९.२ - तिरुवायमोळि पिळ्ळै का व्याख्यान - श्री धनुर्दास स्वामीजी गोपियों द्वारा यशोदा से कृष्णजी के माखन चुराने की शिकायत किये जाने पर कृष्णजी के पक्ष में समर्थन करते हुए कहते हैं कि- क्या उन्होंने कोई ताला तोडा? क्या किसी के गहने/जवाहरात चोरी किये? फिर क्यों वे कृष्णजी की शिकायत करती हैं? उनके स्वयं के घर में बहुत सी गायें हैं जिनसे दूध और बहुत सा मक्खन होता है। वे क्यों कहीं और से उसे चुरायेंगे? वे तो छोटे बच्चे हैं, संभवतः वे किसी और के घर को अपना घर समझकर अन्दर चले गये होंगे। ये गोपियाँ क्यों कहती रहती हैं कि उन्होंने दही, मक्खन, दूध आदि चुराया है?

श्री पिळ्ळै लोकाचार्य स्वामीजी ने भी भगवान के मंगलाशासन (भगवान के कल्याण की चाहना) को समझाते हुए अपनी प्रसिद्ध रचना श्रीवचन भूषण दिव्य शास्त्र में श्री धनुर्दास स्वामीजी की महिमा को दर्शाया है।

कुछ समय बाद, श्री धनुर्दास स्वामीजी अपने अंतिम दिनों में सभी श्रीवैष्णवों को आमंत्रित करते हैं, तदियाराधन कराते हैं और उनका श्रीपाद तीर्थ ग्रहण करते हैं। वे पोंन्नाच्चियार को बताते हैं कि वे परमपद की ओर प्रस्थान करेंगे और पोंन्नाच्चियार को यही कैंकर्य करना है। श्री रामानुज स्वामीजी की पादुकायें अपने मस्तक पर रखकर, वे अपनी चरम तिरुमेनी का त्याग करते हैं। श्रीवैष्णव उनकी अंतिम यात्रा की तैयारी करते हैं, कावेरी नदी का जल लाकर उन्हें ऊर्ध्वपुण्ड्र से सुशोभित करते हैं। पोंन्नाच्चियार (हेमांबा) यह समझते हुए कि श्री धनुर्दास स्वामीजी के लिए परमपद का कैंकर्य प्रतीक्षा कर रहा है, खुशी से उस स्थान की सजावट करती है और पूरे समय सभी श्रीवैष्णवों का ध्यान रखती है। अतः जब श्री धनुर्दास स्वामीजी की तिरुमेनी पालकी पर ले जाया जाती है और सड़क के अंतिम छोर तक पहुँचती है, वे श्री धनुर्दास स्वामीजी के वियोग को सह नहीं पाती और जोर से विलाप करने लगती है और तुरंत अपना शरीर भी त्याग देती है। सभी श्रीवैष्णव जन उन्हें देखकर चकित रह जाते हैं और उसी समय उन्हें भी श्री धनुर्दास स्वामीजी के साथ ले जाने की व्यवस्था करते हैं। यह भागवतों के प्रति लगाव के अत्यधिक स्तर को दर्शाता है जहाँ वे भागवतों से क्षण भर का वियोग भी सहन नहीं कर सकते।

श्री वरवरमुनि स्वामीजी ने विभिन्न आचार्यों के पाशुरों के आधार पर ''इयल सार्रुमुरै'' (जिसका उत्सव के समय में इयरपा के अंत में गाया जाता है) का संकलन किया। इसका पहला पाशुर श्री धनुर्दास स्वामीजी द्वारा लिखा गया है और हमारे संप्रदायों का सार है।

नन्नुम् तिरुवुदैयोम् नानिलथ्थिल् एव्वुयिर्क्कुम
ओन्नुम् कुरै इल्लै ओदिनोम्
कुंरम् एदुथ्थान अदिचेर इरामनुजन थाल
पिदिथ्थार् पिदिथ्थारैप् पर्रि

अर्थ - हम घोषणा करते हैं कि कोई चिंता-फिक्र न करते हुए, वास्तविक संपत्ति (कैंकर्य) को करते रहें क्योंकि हम श्रीवैष्णवों को शरण में है, जो श्री रामानुज स्वामीजी की शरण में हैं, जो स्वयं भगवान कृष्ण के शरणार्थी हैं, जिन्होंने अपने प्रिय भक्तों (गोप और गोपियों) की रक्षा के लिए गोवर्धन पर्वत को उठाया था।

इस पाशुर में धनुर्दासजी ने निम्न सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत दर्शाये हैं-

१. श्रीवैष्णवों की सबसे बड़ी संपत्ति - कैंकर्यश्री हैं (दासत्व की संपत्ति)।

२. श्रीवैष्णवों को सांसारिक विषयों की चिंता नहीं करना चाहिए।

३. श्रीवैष्णवों को कैंकर्यश्री की महा संपत्ति भगवान और श्री रामानुज स्वामीजी की कृपा से मिलती है।

४. आचार्य परंपरा के द्वारा श्रीवैष्णवों का श्री रामानुज स्वामीजी से संबंध है।

बार बार हमारे पूर्वाचार्यों ने बताया है कि श्रीवैष्णव की महिमा किसी विशेष वर्ण में जन्म से नहीं होती अपितु भगवान और अन्य श्रीवैष्णव के प्रति उसकी निष्ठा और प्रेम से होती है। पिल्लै उरंगा विल्ली धनुर्दास का जीवन और हमारे आचार्यों द्वारा उनका महिमा गान, हमारे आचार्यों का इस सिद्धांत पर उनके मनोभाव का स्पष्ट संकेत है।

इस तरह हमने पिल्लै उरंग विल्ली धनुर्दास और पोंन्नाच्चियार के गौरवशाली जीवन के कुछ अंश को मनन किया। वे दोनों ही भागवत निष्ठा में पूर्णतः स्थित थे और श्री रामानुज स्वामीजी के बहुत प्रिय थे। हम सब उनके श्रीचरण कमलों में प्रार्थना करते हैं कि हम दासों को भी उनके अंश मात्र भागवत निष्ठा की प्राप्ति हो।

पिल्लै उरंगा विल्ली (धनुर्दास स्वामीजी) की तनियन

कुम्भाश्लेषा समुद्भूतं अंतरंगचरं हरेः।
रामानुजस्पर्शवेधि धनुर्दासमहं भजे।।

तिरुमालै आंडान

- श्री मधुसूदन लक्ष्मीनारायण राव्वड

माघे मघायां संभूतम द्राविड़ांनाय देशिकम।
तुरियार्यम यतींद्रस्य मालाधर गुरुं भजे।।

श्री मालाधर स्वामीजी का अवतार माघ मास के मघा नक्षत्र को तिरुमालिरुंचोलै (श्रीसुंदरबाहु भगवान - मदुरै) में हुआ था। इस साल १९-०२-२०१९ को इनकी जयंती मनाई जाएगी। श्री यामुनाचार्य स्वामीजी उनके आचार्य थे और श्री रामानुज स्वामीजी उनके मुख्य शिष्य थे।

श्री यामुनाचार्य स्वामीजी ने अपने पाँच मुख्य शिष्यों को यतिराज श्री रामानुजाचार्य को सम्पूर्ण उपदेश देने के लिए आज्ञा दी थी। उनमें से एक श्री मालाधर स्वामीजी श्री रामानुज स्वामीजी को सहस्रगीति का उपदेश देते थे।

एक समय श्री यतिराज, श्री मालाधराचार्य स्वामी से सहस्रगीति का व्याख्यान श्रवण कर रहे थे। श्री मालाधराचार्यजी एक गाथा (२.३.३) का अर्थ बता रहे थे कि इस गाथा में श्री शठकोप स्वामीजी दुःखी होकर यह कह रहे हैं कि भगवान ने कृपा कर मुझे ''स्वरूप ज्ञान'' प्रदान किया है लेकिन फिर भी इस दुःखपूर्ण संसार में मुझे अभी तक रखा है। यह सुनकर यतिराज ने कहा कि ''इस गाथा का अर्थ यह नहीं दूसरा है।'' यह कहकर आपने दूसरा अर्थ करते हुए कहा कि इस गाथा में श्री शठकोप स्वामीजी आनंदित होते हुए यह कह रहे हैं कि मैं अनादिकाल से इस संसार में दुःख भोग रहा था लेकिन अब आपने मुझ पर विशेष कृपा कर दी है जिससे मैं आनंदित हूँ।

यह अर्थ सुनते ही श्री मालाधराचार्यजी कुपित हुए और उन्होंने कहा कि ''यह आप विश्वामित्र की सृष्टि के समान अपने मन से ही अर्थ कर रहे हैं, जो ठीक नहीं है। बाद में श्री मालाधराचार्य पुस्तक बंद करके अपने घर को यह कहते हुए चले गए कि अब भविष्य में स्वयमेव ही पढ़ लेना, मेरे पढ़ाने की तुम्हें कोई आवश्यकता नहीं है।

यह समाचार जब श्री गोष्ठिपूर्ण स्वामीजी ने सुना तो वे तत्काल श्रीरंगम् आए और श्री मालाधराचार्य स्वामीजी को प्रेमपूर्वक समझाते हुए कहा कि ''जैसे सांदीपनि गुरु के शिष्य भगवान श्रीकृष्ण चौंसठ कलाओं में प्रवीण थे, वैसे ही श्री रामानुजाचार्य को भी समझो।'' इसके उत्तर में जब श्री मालाधराचार्य स्वामीजी ने यतिराज श्री रामानुजाचार्य के द्वारा किए गए सहस्रगीति के विशेषार्थ का वर्णन किया तब श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामी ने कहा कि ''श्री रामानुजाचार्य ने जैसा अर्थ किया है, वैसा ही अर्थ पूर्वकाल में श्री यामुनाचार्य स्वामीजी ने भी की थी। आपने उक्त अर्थ से अन्य अर्थ किया इसलिए श्री रामानुजाचार्य ने उस पूर्व सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है।'' इसके पश्चात् श्री मालाधराचार्य स्वामीजी यतिराज के ऊपर प्रसन्न हुए एवं उनको पूर्ववत सहस्रगीति का उपदेश सुनाने लगे।

एक दिन फिर किसी गाथा के अर्थ पर गुरु शिष्य में मतभेद हो गया। तब यतिराज ने कहा कि ''हे गुरुदेव! श्री यामुनाचार्य स्वामीजी ने इसका जो अर्थ किया है वह आप जो अर्थ कह रहे हैं वैसा नहीं।'' यह सुनते ही श्री मालाधराचार्यजी ने उनसे कहा- ''जब आपने श्री यामुनाचार्य

यात्रियों को सूचना

पीने का पानी और सुरक्षाः अलिपिरि से पैदल रास्ते में जानेवाले भक्तों को रास्ते भर पीने के पानी को प्रबंध किया गया है और यात्रियों की सुरक्षा के लिए देवस्थान ने सुरक्षाकर्मियों की नियुक्ति की।

स्वामीजी को देखा तक नहीं हैं, तो फिर ऐसी बातें क्यों कर रहे हैं, जैसे कि वर्षों उनके संपर्क में रहे हो।'' इसके प्रत्युत्तर में यतिराज ने कहा कि ''जिस प्रकार द्रोणाचार्य का एकलव्य नामक शिष्य था, उसी प्रकार मुझे भी आप श्री यामुनाचार्य स्वामीजी का एकनिष्ठ शिष्य समझिए।'' यह सुनते ही श्री मालाधराचार्य स्वामीजी ने इनकी अलौकिक प्रतिभा से प्रभावित होकर इनको भगवान श्रीमन्नारायण के विशिष्ट अंश मानकर अपना विवाद समाप्त किया।

जब सहस्रगीति के ५.२ पाशुर - ''पोलिग पोलिग'' का वर्णन श्री मालाधराचार्य स्वामीजी कर रहे थे तब श्री गोष्ठिपूर्ण स्वामीजी कहते हैं कि इस उपरोक्त पाशुर में वर्णित वह महापुरुष श्री रामानुजाचार्य ही हैं जिसका उल्लेख श्री शठकोप स्वामीजी ने इनके अवतार के ४००० वर्ष पहले ही भविष्यवाणी कर दी थी और कहा कि इन महापुरुष के अवतार से कलि का नाश हो जाएगा और सारा संसार श्रीवैष्णवत्व को अपनायेगा। यतिराज के बारे में इस रहस्य को जानने पर वे अत्यंत विस्मित हो गए और उन्हें अपने आचार्य श्री यामुनाचार्य के समान मानने लगे। उनमें ही पूर्ण निष्ठा रखने लगे और अपने सुपुत्र सुंदरबाहु को यतिराज का शिष्य बनाकर अपने को कृतार्थ माने।

ऐसे महान श्री मालाधर स्वामीजी, जिनकी अपने आचार्य श्री यामुनाचार्य स्वामीजी और श्री रामानुज स्वामीजी में अत्यंत निष्ठा थी, के चरणों में साष्टांग कर प्रार्थना करते हैं कि हम सबकी भी यतिराज श्री रामानुजाचार्य में अपूर्व निष्ठा बढ़े।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

सप्तगिरि चंदादारों के लिए सूचना

सप्तगिरि मासिक पत्रिका पाठकों को हर महीने सही ढंग से पहुँचाने के लिए विविध क्रियाकलाप कार्य कर रहे हैं विषय पाठकगण समझ सकते हैं। इसी विषय के दौरान भक्तों का पता क्रमबद्ध करने के लिए कार्यवाहीन चर्याये लेते है। पाठकगण इस विषय को दृष्टि में रखकर निम्नलिखित प्रकार अपना संबंधित विवरण प्रधान संपादक कार्यालय को सूचित कीजिए।

१. 'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका के बारे में सुझाव/सूचनाएँ/शिकायतों को sapthagiri_helpdesk@tirumala.org के द्वारा सूचित कीजिए।

२. सप्तगिरि चंदादारों का पता क्रमबद्ध कराने के लिए ०८७७-२२६४५४३ फोन नंबर को चंदादार फोन करके अपना पूरा पता, पिन कोड, मोबाइल नंबर जैसे विवरण कार्यकालीन (सुबह १०.३० से सायं ५.०० के अंदर) समयों में संपर्क करें।

३. उपरोक्त फोन नंबर या वेबसैट sapthagiri_helpdesk@tirumala.org के द्वारा भी अपने विवरण को बता दे सकते हैं।

४. आनलॉइन चंदादार अपने पूरे पते के संबंधित विवरण ति.ति.दे. वेबसैट के द्वारा बता दें।

प्रधान संपादक,

सप्तगिरि कार्यालय, तिरुपति।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

देवुनिकडपा
श्री लक्ष्मी वेंकटेश्वरस्वामीजी का
वार्षिक ब्रह्मोत्सव

०५.०२.२०११ से
१४.०२.२०११ तक

०५.०२.२०११
मंगलवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - चंद्रप्रभावाहन

०६.०२.२०११
बुधवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - महाशेषवाहन

०७.०२.२०११
गुरुवार
दिन - लघुशेषवाहन
रात - सिंहवाहन

०८.०२.२०११
शुक्रवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - हनुमद्वाहन

०९.०२.२०११
शनिवार
दिन - मोतीवितानवाहन
रात - गरुडवाहन

१०.०२.२०११
रविवार
दिन - कल्याणोत्सव
रात - गजवाहन

११.०२.२०११
सोमवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - धूलि उत्सव

१२.०२.२०११
मंगलवार
दिन - सर्वभूपालवाहन
रात - अश्ववाहन

१३.०२.२०११
बुधवार
दिन - वसंतोत्सव, चक्रस्नान
रात - ध्वजावरोहण, हंसवाहन

१४.०२.२०११
गुरुवार
रात - पुष्पयाग

श्री पद्मावतीदेवी का

महाशेषवाहन पर
अलंकरणों के साथ संपदाओं की माँ

मोतिओं की मालाओं के बीच मोतियों की
आरति की रोशनियों में आनंद देती हुए अलमेलुमंगा

भद्रगज पर नीराजन लेती हुए
'गजलक्ष्मी' श्री अलमेलुमंगा!

आनंदामृत बांटती हुए
आनंदमयी श्री अलमेलुमंगा

श्री पद्मावती के उत्सव के संरंभ में भाग लेते हुए उभय तेलुगु
राज्यों के राज्यपाल-दंपति माननीय श्री ई.एस.एल.नरसिंहन्

तिरुमलेश की प्रियभामिनी के जन्मदिन के उपलक्ष्य में
भेजा हुआ उपहार वही! पंचमीतीर्थ के दिन के सोने का हार!

०४-१२-२०१८ से १२-१२-२०१८ तक तिरुचानूर में संपन्न हुयी ब्रह्मोत्सवों का दृश्य

कार्तिक ब्रह्मोत्सव संरंभ

कल्पवृक्ष की छाया में वरप्रदायिनी
'वरलक्ष्मी' की दी हुयी दिव्य आरतियाँ

तिरुचानूर के ब्रह्मोत्सवों में
श्री जिय्यंगारों के पाशुरों की दिव्य गोष्ठि!

सूर्यप्रभा में चमकते हुए
श्री वेंकटेश की पटरानी श्री पद्मावती

ब्रह्मांडनायकी ब्रह्मोत्सवों में
भक्त वृन्द के आनंद का संरंभ!

संपदाओं की माँ के लिए सप्तगिरीश के भेजे हुए 'उपहार' के साथ
ति.ति.दे. के जिय्यंगार, अर्चक व उन्नताधिकारी गण!

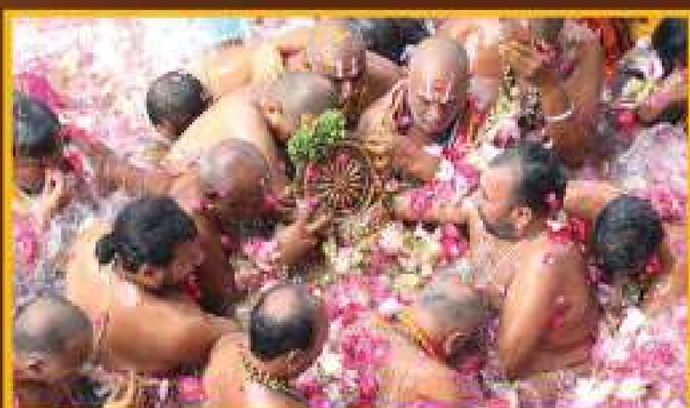

"पंचमीतीर्थ" के दिन पद्म सरोवर में
अवभृथस्नान करते हुए श्री सुदर्शन भगवान!

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

तिरुपति श्री कपिलेश्वरस्वामीजी का ब्रह्मोत्सव

२५.०२.२०१९ से ०६.०३.२०१९ तक

२५.०२.२०१९ सोमवार
दिन - (पालकी उत्सव) ध्वजारोहण
रात - हंसवाहन

२६.०२.२०१९ मंगलवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

२७.०२.२०१९ बुधवार
दिन - भूतवाहन
रात - सिंहवाहन

२८.०२.२०१९ गुरुवार
दिन - मकरवाहन
रात - शेषवाहन

०१.०३.२०१९ शुक्रवार
दिन - तिरुचि में उत्सव
रात - अधिकारनंदिवाहन

०२.०३.२०१९ शनिवार
दिन - व्याघ्रवाहन
रात - गजवाहन

०३.०३.२०१९ रविवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - अश्ववाहन

०४.०३.२०१९ सोमवार
दिन - रथयात्रा
रात - नंदिवाहन (महाशिवरात्रि)

०५.०३.२०१९ मंगलवार
दिन - पुरुषामृगवाहन
रात - (कल्याणोत्सव) तिरुचि उत्सव

०६.०३.२०१९ बुधवार
दिन - सूर्यप्रभवाहन पर नटराजस्वामी, त्रिशूलस्नान
रात - ध्वजावरोहण, रावणासुरवाहन

श्री मणक्काल्नम्बि (श्री राममिश्र स्वामीजी)

- श्री चन्द्रकान्त घनश्याम लहोती

तिरुनक्षत्र - कुम्भ मास, मघा नक्षत्र

अवतार स्थल - मणक्काल (श्रीरंगम् के पास कावेरी नदी के तट पर स्थित एक छोटा-सा गाँव मणक्काल)

आचार्य - उय्यकोण्डार (श्री पुण्डरीकाक्ष स्वामीजी)

शिष्य - आळवन्दार, तिरुवरंगपेरुमाळ् अरयर् (आळवन्दार के पुत्र), दैवतुक्करसु नम्बि, पिळ्ळै अरसु नम्बि, सिरु पुळ्ळूरुडैय्यार् पिळ्ळै, तिरुमालिरुन्चोलै दासर, वंगिपुरत्तु आच्चि।

मणक्काल्नम्बि, श्री राममिश्र नाम से भी जाने जाते हैं। इनका जन्म मणक्काल नामक एक छोटे गाँव में हुआ। इनकी ख्याति सम्प्रदाय में मणक्काल्नम्बि के नाम से हुई। अपने आचार्य (श्री पुण्डरीकाक्ष स्वामीजी) की सेवा में बारह वर्ष रहे। इन बारह वर्षों के मध्य उनके आचार्य की पत्नी का परमपद प्रस्थान हुआ। उसके पश्चात् मणक्काल्नम्बि ने स्वयं अपने आचार्य के तिरुमाली और परिवार की देख रेख की जिम्मेदारि सम्भाली।

अपनी आचार्य निष्ठा और घर परिवार की जिम्मेदारी सँभालने का परिचय देते हुए, एक घटना बहु चर्चित है। एक बार आचार्य श्री पुण्डरीकाक्ष स्वामीजी की पुत्रियाँ कावेरी नदी के तट से वापस आ रही थीं, तब रास्ते में कीचड़ के कारण वह आगे नहीं बढ़ पाती और वहीं रुक जाती हैं। यह देख श्री राममिश्र स्वामीजी छाती के बल कीचड़ पर लेट जाते हैं और अपने आचार्य की पुत्रियों को अपनी पीठ पर चलकर कीचड़ पार करने को कहते हैं। उनके आचार्य श्री पुण्डरीकाक्ष स्वामीजी को जब इस घटना का वृत्तांत मिला, तब वह मणक्काल्नम्बि की आचार्य चरणों में भक्ति और जिम्मेदारी वहन करने की क्षमता को देख अत्यंत ही प्रसन्न हुए और श्री राममिश्र स्वामीजी से पूछा - 'हे श्री राममिश्र स्वामीजी! क्या इच्छा है तुम्हारी?' यह पूछने पर श्री राममिश्र स्वामीजी कहते हैं - निरन्तर मैं आपकी सेवा में तत्पर रहूँ, बस यही मेरी इच्छा है।

श्री पुण्डरीकाक्ष स्वामीजी अति प्रसन्न होकर श्री राममिश्र स्वामीजी को द्वयमहामन्त्र का उपदेश फिर से कराते हैं। (सम्प्रदाय में ऐसी मान्यता है कि जब श्रीवैष्णवाचार्य प्रसन्न होते हैं तब वे अपने शिष्य को द्वयमहामन्त्र का उपदेश फिर से कराते हैं)।

श्री पुण्डरीकाक्ष स्वामीजी अपने अन्तकाल में श्री राममिश्र स्वामीजी को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करते हैं और श्री राममिश्र स्वामीजी को अपने अंतिम उपदेश में नाथमुनि स्वामीजी को दिए वचनानुसार उनके पौत्र, ईश्वरमुनि के पुत्र यामुनाचार्य को सद्धर्म मार्ग में प्रशिक्षण देकर, हमारे सत्संप्रदाय का उत्तराधिकारी नियुक्त करने के लिए कहते हैं।

ईश्वरमुनि के यहाँ यमुनैतुरैवर का जन्म होता है, श्री राममिश्र स्वामीजी, यमुनैतुरैवर के सम्प्रदायानुसार पंच संस्कार दीक्षा संपन्न करवाते हैं (संप्रदाय रिवाजानुसार शंख चक्र प्रदान करना) यानि पंच संस्कार, शिशु के नामकरण संस्कार (जो ग्यारहवें दिन पर होता है) के समय पर भी किया जाता था। उस जमाने में बाल्य काल में ही शिशु को तिरुमंत्र का उपदेश देकर, उसका गोपनीय अर्थ समझकर मनन करने की बात समझाते थे। जब बालक यौवन अवस्था को प्राप्त करता था, तब उसे भगवान की मूर्ति/शालग्रम की आराधना सिखाई जाती थी (तिरुवाराधनम्)।

यमुनैत्तुरैवर बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि के धनी थे। प्रतिभाशाली और बुद्धिमान भी थे, इसी कारण वह आळवन्दार (अर्थात् जो रक्षा करने के लिए आये हो) नाम से जाने गए हैं, अपनी इसी प्रतिभा के बल पर कोलाहल पंडित को शास्त्रार्थ में पराजित कर, तत्कालीन राजा से आधा राज्य

वार्षिक तिरुनक्षत्र (१९.०२.२०१९) के संदर्भ में...

पारितोषक रूप में प्राप्त कर, आळवन्दार नाम भी प्राप्त किया। तत्पश्चात् यमुनैत्तुरैवर, राज्य के परिपालन में व्यवस्त हो गए। अतः कुछ इस प्रकार वह इस भौतिक जगत के भवसागर में व्यवस्त हो गए, वह अपने इस धरा पर अवतरण का कारण ही भूल गए। श्री राममिश्र स्वामीजी यह सब देखकर अत्यंत दुःखित हुए और अपने आचार्य के वचन को याद कर, उन्हें (आळवन्दार) भगवद्भक्ति के सद्मार्ग का दर्शन करवाने की मन में ठान ली।

इसी सद्भावना से श्री राममिश्र स्वामीजी जब आळवन्दार से मिलने गए तो मुख्य द्वारपालक ने उन्हें रोका। श्री राममिश्र स्वामीजी की सद्भावना आळवन्दार के प्रति और मजबूत हुई और इसी भावना से उन्होंने छुपके से राजप्रसाद के प्रधान रसोइये से मित्रता कर कहा कि हर रोज अपने राजा (आळवन्दार) को हरी सब्जी खिलाना और उसे मैं हर रोज लाकर आऊँगा ताकि इससे तुम्हारे राजा का स्वास्थ्य अच्छा बनी रहे। इसके पश्चात् आळवन्दार को हर रोज हरी सब्जी भोजन में मिलती रही, जिससे उनकी आसक्ति हरी सब्जी में और भी अधिक हो गयी। उनमें और उनके विचारों में धीरे धीरे परिवर्तन होने लगा। तभी अचानक एक दिन हरी सब्जी भोजन में न मिलने पर आळवन्दार अपने रसोईयों से पूछा है ‘‘आज हरी सब्जी क्यों नहीं बनायीं’’ तो प्रमुख रसोइया कहता है, एक श्रीवैष्णव आया करते थे, उनके आग्रह पर हम उनकी हरी सब्जी आपको हर रोज परोसा करते थे, पर वह आज नहीं आये अतः हरी सब्जी आज भोजन में नहीं आयी। यह जानकर आळवन्दार अपने द्वारपालक को आज्ञा देते हैं कि वह श्रीवैष्णव को उनके दरबार में आमन्त्रित करें। इस प्रकार आमंत्रण पाकर अति प्रसन्न श्री राममिश्र स्वामीजी आळवन्दार से मिलने राजदरबार में जाते हैं। वहाँ आळवन्दार श्री राममिश्र स्वामीजी से पूछते हैं- ‘क्या उनको धन की जरूरत है?’ तब श्री राममिश्र स्वामीजी कहते हैं- मेरे पास श्री नाथमुनि के द्वारा प्रसादित अकूत धन है जो मैं तुम्हें (आळवन्दार) देना चाहता हूँ। यह सुनकर अति प्रसन्न आळवन्दार अपने अनुचरों को आज्ञा देते हैं कि कभी भी श्री राममिश्र स्वामीजी आए तो उन्हें तुरन्त अन्दर भेज दे। इस प्रकार आळवन्दार के विशेष अनुग्रह से श्री राममिश्र स्वामीजी, उन्हें भगवद्गीता का सदुपदेश देते हैं जिसे सुनकर आळवन्दर में परिवर्तन होने लगता है। श्री राममिश्र स्वामीजी के अनुग्रह से प्राप्त विशेष ज्ञान से परिवर्तित आळवन्दार उनसे पूछते हैं - ‘‘भगवद्गीता का सारांश जिससे भगवान का साक्षात्कार हो’’ तब श्री राममिश्र स्वामीजी उन्हें चरमश्लोक का गोपनीय रहस्य बतलाते हैं। इसके पश्चात् श्री राममिश्र स्वामीजी आळवन्दार को तिरुवरंगम ले जाते हैं और भगवान के दिव्य मंगल (अर्चामूर्ति) स्वरूप का दर्शन करवाते हैं। तिरुवरंगम भगवान श्री रंगनाथजी के दिव्य स्वरूप को देखकर आळवन्दार भौतिक जगत से जुडी हुई डोरी को परिपूर्ण त्यागते हैं। श्री राममिश्र स्वामीजी अपने वैकुण्ठ गमन से पहले आळवन्दार को

१. श्री नाथमुनि स्वामीजी के बारे में सदैव सोचने का उपदेश देते हैं।

२. उन्हें अपने बाद सम्प्रदाय का उत्तरदायित्व सौंपते है।

३. भविष्य में उनके जैसा एक परिवर्तकाचार्य को सम्प्रदाय के उत्तरदायित्व को सौंपने की घोषणा करने को कहते हैं।

अपने आचार्य मणक्काल्नम्बि के आदेश और उनको दिए वचनानुसार आळवन्दार ने श्री रामानुजाचार्य को भविष्य परिवर्तकाचार्य के रूप में घोषित किया। अतः हमारे सत्सम्प्रदाय के पथप्रवर्तक श्री रामानुजाचार्य हुए।

तो इस प्रकार अपने आचार्य को दिया गया वचन पूर्ण कर मणक्काल्नम्बि परमपद को प्राप्त हुए।

श्री राममिश्र स्वामीजी का तनियन

कुम्भ मासे मघोद्भुतं राम मिश्र मुपास्महे।
पुण्डरीकाक्ष पदाम्भोज समाश्रयण शालिनः।।

अयत्नतो यौमुनमात्मदासमलर्क पत्रार्पण निष्क्रयेण
यः क्रीत्वानास्तित यौवराज्यम् नमामितं राममेयसत्वम्।।

अनुज्झित क्षमायोगं अपुण्य जन बाधकम्।
अदृष्ट मद रागन्तं रामं तुर्यमुपास्महे।।

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

शरणागति मीमांसा

(पंचम खण्ड)

सियाराम ही उपेय

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि तापडिया

८२

श्रीमते रामानुजाय नमः

श्री देवराज गुरु कहते हैं कि हे महात्माओं! इस कारण मुमुक्षुओं को परमात्मा से नाशवान पदार्थ की भूल कर भी याचना नहीं करनी चाहिए। यही सच्चे मुमुक्षुओं का लक्षण है। और भी ध्यान करके सुनिए। सच्चे मुमुक्षु को इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिये कि, चौदह लोकों के पदार्थ न श्री भगवान से कभी मांगे न चौदह लोकों में जाने की स्वप्न में इच्छा करे, न चौदह लोकों के साधन की तरफ कभी झुके, न चौदह लोकों के मिलने का साधन बताने वाले शास्त्रों को कभी देखें न सुनें; क्योंकि खुद श्री भगवान ने गीता में श्री मुख से अर्जुनजी से आज्ञा किया कि अर्जुन! ब्रह्म के लोक तक जितने लोक हैं इन लोकों में जो जीव आते हैं उन्हें आवा-गमन बना ही रहता है। सच्चा सुख उन लोगों को प्राप्त नहीं होता न उन लोगों का जन्मना मरना छूटता है। याने पाताल से लेकर ब्रह्म लोक तक ये सब कर्म भोग भोगने के स्थल हैं। जिस चेतन की इच्छा होया कि हम जन्म मरण के बला से छूट जावें, सदा के लिए इस माया चक्र से छुटकारा पा जावें। फिर महा नरक रूप इस गर्भ-स्थली में न आना पड़े। वे तो हमारे ही मिलने की कोशिश करें क्योंकि हम जिसको प्राप्त हो जायेंगे उस चेतन को फिर अनेक दुःखों का घर इस भयानक संसार में कभी भी जन्म नहीं मिलेगा, सदा के लिये वह मुक्त हो जायगा। यह श्लोक है-

आब्रह्म भुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते॥

हे मुमुक्षु महात्माओं! जैसे अनन्य मुमुक्षुओं के लिये परमात्मा के सिवाय इतर देवतान्तरों में लगना या इतर देवतान्तरों में रहने वाले जीवों का सहवास करना, उनके अनन्यता का भंजक होता है और जैसे श्री लक्ष्मीकान्त के सिर्फ निर्हेतुक कृपा ही के भरोसे संसार सागर से पार होने का भरोसा करके रहने वाले जो मुमुक्षु हैं उन लोगों को श्री भगवान के अतिरिक्त इतर साधनरूप से कर्म, ज्ञान, भक्ति में पड़ना या मन से भी श्रीहरि की कृपा के अतिरिक्त इतर साधनों का चिन्तन करना या भगवत्कृपा के अतिरिक्त इतर साधन वालों का सहवास करना उनके उपाय का भंजक बनता है। उसी प्रकार इसी जन्म के अन्त में दिव्य धाम में जाकर नित्य मुक्तों के समान श्री परमपद नाथ भगवान की सदा के लिए नित्य सेवा मुझे अवश्य मिल जाय; इस बात को जो लोग श्री भगवान के भरोसे अवश्य निश्चय कर चुके हैं उनको इन चौदह लोकों में जाने की चेष्टा करनेवाले लोगों का सहवास करना या इन चौदह लोकों के मिलने के लिए साधन बताने वाले शास्त्रों को देखना सुनना, ये सब इसी जन्म के अन्त में परमपद मिलने की जो आशा है उसको नष्ट कर देने वाले हैं यानी इतर उपायान्तर छोड़ देने पर ही श्री भगवान उपाय बनते हैं। जरा मन से भी दूसरे उपायों की तरफ यदि चेतन झुकेगा तो मैं शरणागत हूँ ऐसा भले ही जिन्दगी भर पुकारा करे परन्तु श्री भगवान कभी भी उपाय न हो सकेंगे; क्योंकि यह सख्त नियम है कि उपायान्तर में प्रवृत्ति शरणागति को भंजक हो जाती है। उसी प्रकार उपायान्तर यानी फलान्तर छोड़ने ही पर नित्य कैंकर्य तथा श्री भगवान फल होते हैं। जैसे उपायान्तर की तरफ प्रवृत्ति

वाले को श्री भगवान उपाय नहीं हो सकते यानी भगवान को अपना उपाय जिसको मानना है उसको सबसे पहले सदा के लिए उपायान्तर को छोड़ देना ही होगा। उसी प्रकार जिसको इसी जन्म के अन्त में संसार सिन्धु से पार होकर बिरजा में नहाकर, परमपद में जाकर, श्री भगवान की नित्य सेवा में जाना ही है। उन मुमुक्षु महात्माओं को तो चौदह लोकों की चीजों की अथवा चौदह लोकों में जाने की जड़ मूल से चाहना त्यागनी ही होगी। यदि अपनी जडता वश इस बात पर ध्यान नहीं जावेगा तो इस जन्म के अन्त में ही परमपद मिलने का मनोरथ स्वप्न में भी पूरा न हो सकेगा यह सब शास्त्रों से सिद्ध है। बारम्बार हम लोगों के लिए पहुँचे हुए बड़े-बड़े मुमुक्षु महापुरुषों के द्वारा पुनः - पुनः चेतावनी दी गयी है। इस पूवोक्त प्रसंग को सच्चे मुमुक्षुओं को कभी भी भूलना नहीं चाहिए सच्चे मुमुक्षुओं को चाहिए कि चाहे भयंकर से भयंकर भी अपने को रोग हो जाय, या अपनी स्त्री को अपने प्यारे पुत्र शिष्य को रोग हो जाय, या किसी प्रिय बन्धुओं को या शरीर के किसी सम्बन्धियों को कैसा भी कष्ट क्यों न हो जाय, उस कष्ट के छुड़ाने के लिए परमात्मा से कभी भी प्रार्थना न करे, क्योंकि क्षणिक अनित्य नाशवन्त जो है उसके लिये नित्य चीज में बाधा पहुँचाना इस शरीर का तथा शरीर सम्बन्धियों का आज या सौ वर्ष में कभी न कभी तो वियोग होने ही वाला है। लाख भी कोई प्रयत्न करेगा परन्तु जो चीज नाशवान है वह नाश होकर ही रहेगी। जब कि श्री भगवान भी मनुष्य शरीर को धरकर आते हैं और अपने नियम के खिलाफ एक दिन भी ज्यादा उस रूप से साक्षात् होकर नहीं बिराजते हैं। जैसे कि भगवान ने श्रीकृष्णावतार में सवा सौ वर्ष ही इस लीला विभूति में साक्षात् होकर रहने का संकल्प किया था। अपने नियम के अनुसार स्वतन्त्र सर्व समर्थ होते हुए भी एक दिन भी ज्यादा नहीं रहे, श्रीरामावतार में भी जितने दिन नियम करके आये उसके पश्चात् एक दिन भी ज्यादा नहीं बिराजे। जबकि परमात्मा भी इस मृत्यु लोक में इस प्रकार मर्यादा रखते हैं तो दूसरा ऐसा कौन है कि मरे बिना बच सकेगा।

मृत्यु से तो पापी लोग डरते हैं क्योंकि उन्हें मरकर भयंकर नरकों में जाना होता है। परन्तु जो लोग सद्गुरु के द्वारा अपनी आत्मा को सदा के लिए प्यारे परमात्मा के चरणों में अर्पण कर चुके हैं उन्हें तो यह मलमूत्र, कफ, रुधिर, मज्ञा, चर्म, हड्डी आदि से बना हुआ जो प्राकृत शरीर को छोड कर भगवान के पास जाते है।

जबकि परमपद के अतिरिक्त कुछ भी याचना करना अपने परम फल का विरोधी है, ऐसा बार-बार बड़े लोग समझा गये हैं, उसके लिए प्रार्थना समझदार मुमुक्षु कैसे कर सकते हैं? बहुत रोग बढ़ जायेगा तो मृत्यु हो जावेगी, इसके सिवा और क्या हो सकता है? यह तो कभी न कभी होकर ही रहने वाला है। इससे मुमुक्षुओं को कभी भी कायर नहीं होना चाहिए। मृत्यु से कभी भी भय नहीं खाना चाहिए। मृत्यु के दिन तो माने मुमुक्षुओं के लिए साम्राज्य दिवस है। मृत्यु से तो पापी लोग डरते हैं क्योंकि उन्हें मरकर भयंकर नरकों में जाना होता है। परन्तु जो लोग सद्गुरु के द्वारा अपनी आत्मा को सदा के लिए प्यारे परमात्मा के चरणों में अर्पण कर चुके हैं उन्हें तो यह मलमूत्र, कफ, रुधिर, मज्ञा, चर्म, हड्डी आदि से बना हुआ जो प्राकृत शरीर है, इसको छोड़ते ही श्री भगवान के समान अत्यन्त मनोहर सदा के लिए किशोरावस्थावाला, अनेक गुण संपन्न, सुंदर, सुखमय नित्य सदा परमात्मा की सेवा लायक दिव्य शरीर मिल जाता है और सदा के लिए भयंकर संसार के जन्म-मरण चक्रों से छूटकर आवागमन से रहित होकर, जहाँ आनन्द की सीमा नहीं होती है, ऐसा जो परमधाम है, वहाँ सदा के लिए चला जाता है। सद्गुरु के सच्चे कृपा पात्र मुमुक्षुओं का तो मृत्यु का जो दिन है वह अत्यन्त शुभ दिन है। इसी से सच्चे मुमुक्षु जो लोग हैं वे तो अत्यन्त प्रिय बन्धुओं के समान मृत्यु की प्रतीक्षा किया करते हैं। जैसे-

प्रायशः पाप कारित्वान्मृत्योरुद्विजतेजनः।
कृतकृत्याः प्रतीक्षन्ते मृत्युं प्रियमिवातिथिम्।। (क्रमशः)

भागवत कथा सागर

श्री वराह अवतार

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवांघ्रि सेवक दास
हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

भगवान के सभी अवतार दिव्य, महिमापूर्ण एवं अद्भुत लीलाओं को दर्शाने वाले होते हैं। वास्तव में वे परम गुह्य अवतार हैं। असीम प्रयत्न करने पर भी वे सभी की समझ से परे हैं। इसीलिए श्रीमद्भागवतम् के निष्कर्ष में कहा गया है- ''जन्म गुह्यं भगवतो'' अर्थात् भगवान के सभी अवतार परम गुह्य हैं। नित्य प्रति प्रातः एवं सायंकाल में भगवान के अवतारों एवं उनकी लीलाओं की महिमा का गुणगान करने वाला व्यक्ति समस्त सांसारिक दुःखों से अवश्य मुक्त हो जाता है। यह जगत दुःखालय है अर्थात् वह बहुतेरे कष्ट देने वाला होता है। लेकिन अत्यंत दयालु भगवान भक्तों के लिए विभिन्न लीलाएँ रचते हैं, और भक्त भगवान की लीलाओं एवं उनकी महिमा के निरंतर स्मरण द्वारा सांसारिक दुःखों से बचे रहते हैं। भगवान जब अवतरित होते हैं तो वे दो कार्य करते हैं। एक है ''परित्राणाय साधूनां'' अर्थात् भक्तों की रक्षा करने हेतु, एवं दूसरा है ''विनाशायच दुष्कृताम्'' अर्थात् दुष्टों का नाश करने हेतु। इन दो उद्धेश्यों को पूरा करने के कारण भगवान के अवतारों में उनका गुणगान करने वालों के कष्ट मिटाने की असीमित शक्ति होती है। अन्य महत्वपूर्ण बात यह है कि भगवान किसी ठोस उद्देश्य की प्राप्ति के पर्याप्त कारण के बिना अवतरित नहीं होते हैं। इसलिए भगवान का अवतरित होने पर उनकी लीलाएँ असामान्य एवं महिमापूर्ण होती हैं। रसातल कहलानेवाले सृष्टि के सबसे नीचे वाले स्थान से पृथ्वी को उठा कर लाने के महान कार्य को संपन्न करने के लिए इस जगत में भगवान का वराह अवतार का आगमन हुआ था। रसातल जैसे गंदे स्थान से पृथ्वी को उठाने का कार्य करने के लिए भगवान ने एक वराह का रूप धारण किया। लेकिन वराह रूप धारण करने से भगवान की गौरवपूर्ण स्थिति एवं उनकी महिमा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इसी कारण श्रीमद्भावतम् में भगवान को ''यज्ञवराह'' कहकर महिमान्वित किया गया है। भागवतम् में वराह अवतार का वर्णन द्वितीय अवतार के रूप में किया गया है। भगवान वराह की लीलाओं का श्रवण करने एवं उन्हें स्वीकार करने वाला व्यक्ति ब्राह्मण हत्या जैसे घोर पापों से भी निश्चित रूप से मुक्त हो जाता है। इस भौतिक जगत में वराह अवतार का आगमन कैसे हुआ इसका सुंदर वर्णन इस कथा में प्रस्तुत है।

भगवान के आदेशानुसार ब्रह्मा जी ने विभिन्न जीवों की रचना करने का प्रयास किया लेकिन उनके सभी प्रयत्न व्यर्थ गये। तब उन्होंने अपने ही शरीर से अलग-अलग रूप वाले दो व्यक्तियों को उत्पन्न किया जिनमें से एक पुरुष तथा दूसरा स्त्री का रूप बना। वही पुरुष स्वयंभुव मनु और स्त्री सतरूपा नाम से विख्यात हैं। दोनों का विवाह हुआ और ब्रह्मा जी ने उन्हें जीवों की उत्पत्ति करने का आदेश दिया। लेकिन उस समय पृथ्वी रसातल में डूबी थी। ब्रह्मा जी विचार कर रहे थे कि उसे रसातल से बाहर कैसे निकाला जाये। ऐसा विचार करते समय उनकी नाक से एक छोटा वराह बाहर आया। अंगूठे के नाप वाला वह छोटा वराह जब आकाश की ओर उड़ा तो उसका आकार हाँथी जैसा बहुत बड़ा हो गया। आकाश में स्थित रहकर उस महान वराह ने तीव्र गर्जन किया। ब्रह्मा जी इसकी चर्चा मरीचि जैसे ऋषियों तथा सनक एवं मनु जैसे पुत्रों से करने लगे। चर्चा के समय ही उस असामान्य वराह ने फिर एक तीव्र गर्जन किया जो ब्रह्माण्ड के ऊर्ध्व लोकों तक पहुँचा। उस महान गर्जन को सुनकर जनलोक, तपोलोक एवं सत्यलोक के सभी लोग भगवान की प्रार्थना करते हुए वेद मंत्रों का गायन करने लगे। उनके वैदिक कीर्तन से भगवान अत्यंत प्रसन्न हुए और तुरंत जल में प्रविष्ट हुए।

उस महान वराह के आकाश से समुद्र में कूदने पर ऐसा लगा मानो समुद्र का विभाजन हो गया हो। दोनों ओर जल का स्तर ऊपर उठकर इस प्रकार आसमान को छूने लगा कि मानो समुद्र दयापूर्वक अपने हाँथ उठाकर प्रार्थना कर रहा था कि "हे भगवान! मुझे विभाजित न करो।" वराह भगवान अंदर समुद्र की सतह में गये और पृथ्वी को ढूँढ़कर ऊपर लाने के लिए अपने बाहर निकले दाँतों के अग्र भाग पर रखा। सामान्यतः लोगों का कहना है कि पृथ्वी रसातल में गिर गई थी। लेकिन वैष्णव आचार्यों ने इसे स्वीकार नहीं किया क्योंकि पृथ्वी का आकार रसातल से दस गुना बड़ा है। फिर रसातल कैसे इतनी बड़ी पृथ्वी को अपने अंदर समायोजित कर सकता है? उनके द्वारा की गई यह चर्चा 'विष्णुधर्म' ग्रंथ पर आधारित है। तब यह निष्कर्ष निकाला गया कि पृथ्वी गर्भोदक सागर के जल में डूब गई थी। यह भी बताया गया है कि पृथ्वी को निकालकर लाते समय वराह भगवान ने हिरण्याक्ष राक्षस को भी मारा था। लेकिन वराह भगवान का यह अवतार स्वयंभुव मनु के प्रलय काल में हुआ था। उस समय जनलोक, महर्लोक एवं सत्यलोक के अतिरिक्त नीचे वाले अन्य सभी लोक पानी में डूब गये थे। अतः उन तीन लोकों के निवासियों को वराह भगवान के दर्शन प्राप्त हुए। उन लोकों के सभी भाग्यवान व्यक्तियों ने वराह भगवान की आराधना की और जब भगवान ने जोर से अपना शरीर हिलाया तो सभी के ऊपर जल की बूँदें गिरी और वे शुद्ध हो गये।

गर्भ सागर से पृथ्वी को निकालने के बाद भगवान के खुरों के स्पर्श से पृथ्वी पानी पर तैरने लगी। इस प्रकार भगवान के द्वारा जीवों की उत्पत्ति के लिए पृथ्वी पर स्थान की उपलब्धि निश्चित कर दी गई। उस असाधारण लीला को सम्पन्न करने के बाद भगवान स्वधाम वापस चले गये। भगवान की लीलाओं का श्रवण करना एवं उनका गुणगान करना ही इस भौतिक जगत में कष्टों से छुटकारा पाने का एक मात्र साधन है। वराह भगवान की लीलाओं का श्रवण करने पर हमारे प्रत्यक्ष देव एवं रक्षक जनार्दन भगवान की कृपा प्राप्त होती है।

वास्तव में वराह भगवान का अवतार साक्षात्कार दो बार हुआ था। पहली बार वराह अवतार सागर के गर्भ से पृथ्वी को बाहर निकालने के लिए और दूसरी बार हिरण्याक्ष राक्षस का वध करने के लिए। हिरण्याक्ष, दिति एवं कश्यप मुनि का पुत्र था। एक बार संध्याकाल में कामोत्तेजित होने पर दिति संगम की इच्छा पूर्ण करने के लिए अपने पति के पास पहुँची। एक संत पुरुष होने के कारण कश्यप ने दिति को बताया कि ऐसी इच्छा रखना उसकी त्रुटि है उन्होंने

समझाने का प्रयत्न किया कि संगम के लिए संध्याकाल का समय अनुचित है। लेकिन अन्य विकल्प न पाकर कश्यप मुनि ने संध्या के उस प्रतिबंधित काल में दिति के साथ संगम किया। ऐसा अधार्मिक कार्य के कारण दो राक्षस दिति के गर्भ में प्रविष्ट हो गये। उनके गर्भ में प्रवेश करते ही संपूर्ण जगत में अनेक अपशकुन प्रकट हुए। दिति को अपने किये पर बहुत पश्चात्ताप हुआ और उसने क्षमा याचना की। कश्यप ने दिति को सूचित किया कि उसके दोनों पुत्र परम पुरुषोत्तम भगवान के द्वारा मारे जायेंगे और उसका पोता भगवान का एक शुद्ध भक्त निकलेगा। भविष्य के बारे में यह जानकर दिति बहुत प्रसन्न हुई और राक्षसों के आगमन को विलंबित करने के लिये उन्हें एक सौ वर्षों तक अपने गर्भ में ही रखा।

दिति के गर्भ में पल रहे राक्षसों की शक्ति से सूर्य एवं चंद्रमा का तेज घट गया। इस विषय में विवशता प्रकट करते हुए ब्रह्मा जी ने सभी से भगवत्कृपा की प्रतीक्षा करने के लिए कहा। इसी बीच दिति ने दोनों पुत्रों को जन्म दिया। एक का नाम हिरण्याक्ष और दूसरे का नाम हिरण्यकशिपु रखा गया। हिरण्याक्ष एक शक्तिशाली गदा लेकर संपूर्ण जगत में घूमने लगा। भय के कारण देवता उसके सामने नहीं आते थे। लड़ने के लिए किसी प्रतिद्वंद्वी को न पाकर वह राक्षस समुद्र के अंदर चला गया। वहाँ सीधे वरुण देव के पास जाकर उसने उन्हें युद्ध के लिए ललकारा। लेकिन वरुण देव ने युद्ध करने से इनकार कर दिया और उसे सूचित किया कि शीघ्र ही परम पुरुषोत्तम भगवान उसके घमण्ड को चूर करेंगे। जब भगवान अपने सींग/श्रृंग पर पृथ्वी को लेकर जा रहे थे तब हिरण्याक्ष को उनकी उपस्थिति का पता चला। भगवान की असाधारण शक्ति को न पहचानकर राक्षस ने उन्हें मात्र एक सूकर समझा। उसने भगवान की निन्दा करते हुए उन्हें युद्ध के लिए ललकारा। भगवान ने अपनी योग शक्ति के द्वारा पृथ्वी को पानी की सतह पर तैरा कर छोड़ दिया और उस राक्षस के साथ युद्ध किया। एक लम्बे समय तक युद्ध चलने के कारण ब्रह्मा जी को बहुत चिंता हुई। उन्होंने वराह भगवान को संकेत दिया कि राक्षस के साथ अधिक समय तक खेल करने से कोई लाभ नहीं है और उसे सूर्यास्त से पूर्व ही मार देना चाहिए। इस प्रकार उन्होंने भगवान से प्रार्थना कि राक्षस को मार कर देवताओं को विजयी बनाये।

भगवान ने चक्रायुध के द्वारा उस राक्षस की मायावी शक्ति को नष्ट कर दिया। तब वह राक्षस और अधिक भयंकरता पूर्वक अपने हाँथों से युद्ध करने लगा। वराह भगवान ने राक्षस के सिर पर कनपटी के पास प्रहार किया। आश्चर्यजनक बात है कि वह राक्षस अपनी संपूर्ण शक्ति खो कर प्रंचड वायु द्वारा प्रहारित पेड़ की तरह गिर पड़ा। राक्षस की मृत्यु हो गयी और उसका चेहरा पूर्णतया तेजोमय दिखाई दे रहा था। ब्रह्मा जी ने आश्चर्य एवं गंभीरतापूर्वक कहा ''इतनी अद्भुत मृत्यु किसे प्राप्त हो सकती है।'' मृत्यु के बाद भी राक्षस के चेहरे पर चमक थी क्योंकि उसकी मृत्यु भगवान के मुख का दर्शन करते हुए हुई। उच्च लोकों में सभी ने राक्षस की श्रेष्ठ मृत्यु को सराहा और उन्होंने वराह भगवान की स्तुति की। भगवान ने प्रसन्नतापूर्वक उनकी प्रार्थना स्वीकार की और अपने नित्य उत्सव वाले स्वधाम में चले गये। मृत्यु के समय किसी व्यक्ति द्वारा वराह भगवान की लीलाओं का श्रवण करने से वह निश्चित रूप से वैकुंठ धाम पहुँचता है। भक्तों को कठोर तपस्या करने की आवश्यकता नहीं है। उन्हें केवल भगवान की लीलाओं का श्रवण एवं रसास्वादन करना चाहिए। इस साधारण विधि के द्वारा वे ऐश्वर्य, प्रतिष्ठा एवं लंबी आयु प्राप्त करके अपनी इच्छाएँ पूर्ण कर सकते हैं। भागवत कथा सुनने वाले व्यक्तियों को निश्चित रूप से भगवद्धाम की प्राप्ति होती हैं। ऐसे व्यक्ति इस जगत में प्रसन्नता एवं शांति को प्राप्त करते हैं और अंत में भगवान कृष्ण के गोलोक धाम पहुँचते हैं। भक्तों द्वारा वराह भगवान की लीलाओं का श्रवण उन्हें निश्चित रूप से इस आशीर्वाद से पुरस्कृत करता है।

(गतांक से)

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी

पोरुन्दिय तेशुम् पोरेयुम् तिरलुम् पुहळुम, नल्ल
तिरुन्दिय ज्ञानमुम् शेल्वमुम् शेरुम्, शेरुकलियाल्
वरुन्दिय ञालत्तै वण्मैयिनाल् वन्देडुत्तळित्त
अरुन्तवन्, एंग ळिरामानुजनै यडैबवर्क्के॥३२॥

धर्ममार्गतिरस्कारककलिपुरुषाभिभूतामवनीं निजनिर्हेतुककृपयैव संरक्षितवन्तं महातपस्विनमस्मत् स्वामिनं भगवद्रामानुजं भजमानानां स्वरूपानुरूपं तेजः क्षान्तिः जितेन्द्रियता कीर्तिः सदसद्विवेको भक्तिसंपच्च समृद्धा भवेयुः।

धर्ममार्ग का तिरस्कार करनेवाले कलि से पीडित भूमि की अपनी निर्हेतुक कृपा से उद्धार पूर्वक रक्षा करनेवाले, (शरणागति नामक) श्रेष्ठतपस्या से विभूषित और हमारे नाथ श्री रामानुज स्वामीजी का आश्रय लेनेवालों को स्वरूपानुरूप क्षमागुण, जितेंद्रियत्व रूप, बल, यश, परमविलक्षण सदसद्विवेक और (भक्तिरूप) ऐश्वर्य अपने आप मिल जायेंगे। (विवरण- श्री रामानुज स्वामीजी का आश्रय लेने के लिए हमें किसी प्रकार की योग्यता कमाने की आवश्यकता नहीं रहती; बिना किसी योग्यता के हम उनका आश्रय ले सकते हैं; आश्रय करने पर ज्ञान भक्ति वैराग्य इत्यादि सभी आत्मगुण हमें अनायास मिलेंगे।

श्री रामानुज स्वामीजी का आश्रय लेने के लिए हमें किसी प्रकार की योग्यता कमाने की आवश्यकता नहीं है।

(क्रमशः)

भगवद्गीता और नौजवान

कछुवा सुरक्षा

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवांघ्रि सेवक दास
हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

भगवद्गीता एक अव्यवहार्य पुस्तक नहीं अपितु यह एक अत्यंत व्यवहारिक ग्रंथ है। इसमें निहित पूर्ण ज्ञान में से चंद बातों का अनुसरण करने से ही महान सफलता की प्राप्ति हो जाती है। भगवान कृष्ण के द्वारा स्पष्ट रूप से गीता सार का उपदेश देने के लिए सरल उदाहरणों का प्रयोग किया जाना सभी के लिए इस विषय को पूर्णतया समझने में सहायक है। गीता के व्याख्यान से ज्ञात होता है कि एक कछुवे की विधि को अपनाकर मनुष्य स्वयं को सुरक्षित कर सकता है। कछुवे की एक विशेष कार्य प्रणाली है। उसके शरीर पर एक कठोर आवरण होता है। मोटर-साइकिल चालक के हेलमेट की भाँति विरोधी तत्त्वों से बचने के लिए कछुवे के शरीर का आवरण एक रक्षा कवच का कार्य करता है। किसी खतरे की सूचना मिलते ही कछुवा अपने सभी अंगों को रक्षा कवच के अंदर समेट कर सुरक्षित हो जाता है। वह इस सुरक्षित अवस्था को बहुत शीघ्रता से प्राप्त कर सकता है। कोई जानवर आक्रमण द्वारा केवल कछुवे के कवच तक की पहुँच पाने के कारण उसे क्षतिग्रस्त नहीं कर पाता है। इस प्रकार कछुवा अपने कवच के नीचे सुरक्षित एवं प्रसन्न रहता है। चलो हम जानने का प्रयत्न करते हैं कि कछुवे का यह उदाहरण भगवद्गीता में क्यों दिया गया था।

मनुष्यों की अनेक इन्द्रियों हैं। इनकी संख्या दस है, जिस में से पाँच कर्मेन्द्रियाँ एवं पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। कर्मेन्द्रियों द्वारा हम अपने कार्य करते हैं तथा ज्ञानेंद्रियों के द्वारा ज्ञान अर्थात् जानकारी प्राप्त करते हैं। हाँथ, पैर, उदर, प्रजनन अंग एवं गुदा पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं। आँख, कान, नाक, जिह्वा एवं त्वचा पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। इन इन्द्रियों के द्वारा मनुष्य इन्द्रियविषयों का आनंद लेता है। आँखे सुंदर वस्तुएँ, सिनेमा, टेलीविजन आदि देखने की इच्छुक होती हैं। कान अपनी प्रशंसा, मधुर संगीत आदि सुनना चाहते है; जिह्वा विभिन्न प्रकार के व्यंजनो, पीज़ा, बर्गर आदि का स्वाद लेने के लिए आतुर रहती है; नाक अच्छी सुगंध का आनंद लेना चाहती है, एवं त्वचा कोमल स्पर्श की इच्छा रखती है। इसी प्रकार कर्मेन्द्रियों की भी अनेक भोग इच्छाएँ होती हैं। हम कर्मेन्द्रियों के द्वारा अपने शरीर का पोषण करते हैं और ज्ञानेन्द्रियों से ज्ञान की प्राप्ति करते हैं - इन्द्रियों का उपयोग केवल इसी उद्देश्य के लिए करना चाहिए, अन्य किसी प्रकार के इन्द्रिय भोगों के लिए नहीं। इन्द्रिय भोगों में फँसे व्यक्ति को शीघ्र बीमार पड़ने के कारण अनेक कष्ट मिलते हैं और वह अपने लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर पाता है। लक्ष्य की प्राप्ति के लिए तीव्र बुद्धि की आवश्यकता होती है। इसीलिए भगवान श्रीकृष्ण ने कछुवे के उदाहरण द्वारा

इस बात को समझाते हुए कहा ''जिस प्रकार कछुवा अपने अंगों को संकुचित करके खोल के भीतर कर लेता है, उसी तरह जो मनुष्य अपनी इन्द्रियों को इन्द्रियविषयों से खींच लेता है, वह पूर्ण चेतना में दृढ़तापूर्वक स्थिर होता है।'' (भगवद्गीता २.५८)

किसी खतरे की सूचना मिलते ही कछुवा अपने सभी अंगों को सुरक्षा कवच के अंदर समेट लेता है। इसी प्रकार जीवन के परम उद्देश्य को जानने वाला एवं अपने लक्ष्यों पर केन्द्रित रहने वाला वास्तविक बुद्धिमान व्यक्ति इन्द्रिय भोग के सभी कार्यों को त्याग देता है। वह सदैव स्थिर बुद्धि वाला होता है। बचपन में अर्जुन के कार्य भी इसी प्रकार के थे। द्रोणाचार्य अपने सभी शिष्यों को बहुत पतले मुँह वाला बर्तन देकर उसमें पानी लाने के लिए कहते थे। अर्जुन अपने कौशल द्वारा तीव्रता से पानी भरकर अपने गुरु के पास शीघ्र पहुँच जाते थे और उनसे अधिक चीजें सीख लेते थे। एक बार रात में भोजन करते समय तीव्र हवा चलने से दीपक बुझ गया। तब अर्जुन को पता चला कि बिल्कुल अंधेरे में भी उनका हाँथ भोजन के निवाले को बिना किसी कठिनाई के मुँह में रख सकता है। इससे अर्जुन को संकेत मिला कि वे रात में भी धनुर्विद्या का अभ्यास करके अधिक संवेदनात्मक शक्ति से लक्ष्य को भेद सकते हैं। उसके बाद तीर चलाने में पूर्ण रूप से निपुण होने के लिए अर्जुन ने रात में भी अभ्यास करना आरंभ कर दिया। अर्जुन में सदैव कुछ सीखने के उत्साह से द्रोणाचार्य बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने अर्जुन को संपूर्ण जगत का सर्वोच्च धनुर्धर बनाने का आश्वासन दिया। किसी तरह के इन्द्रिय भोगों की ओर आकर्षित हुए बिना सीखने के उत्साह ने अर्जुन को सदैव के लिए विख्यात बना दिया। इन्द्रिय भोगों से दूर रहने के लिए बहुत तपस्या करनी पड़ती है। तप करने वाले व्यक्तियों को जीवन में उसके अद्भुत परिणाम अवश्य प्राप्त होते हैं। विद्यार्थियों को अर्जुन के पदचिह्नों पर चलते हुए इन्द्रिय भोगों से दूर रहकर अपने लक्ष्य पर केन्द्रित होना चाहिए। उन्हे किसी व्यक्ति के इन्द्रिय भोग के प्रस्ताव से उसी प्रकार तुरंत विमुख हो जाना चाहिए जैसे कछुवा खतरे की सूचना मिलते ही स्वयं को कवच में बंद कर लेता है। इन्द्रियों के इन्द्रियविषयों की ओर आकर्षित होने पर बुद्धि लक्ष्य पर केन्द्रित नहीं हो पाती है। अर्थात् इन्द्रियों के अनियंत्रित होने पर विद्यार्थियों के लिए किसी लक्ष्य को प्राप्त करना संभव नहीं है। यह हाँथ से स्टीयरिंग छोड़ कर कार चलाने या घोड़ो की लगाम पकड़े बिना ही रथ चलाने जैसा है। इससे कार या रथ का गहरी खाई में गिरना निश्चित है। अतः इन्द्रियों को नियंत्रित करके लक्ष्य प्राप्ति की ओर बढ़ने के लिए उनका उचित प्रयोग करना बहुत महत्वपूर्ण है। लक्ष्य प्राप्ति के मार्ग पर चलते समय इन्द्रियों के इन्द्रियभोगों से दूर रहने की प्रेरणा पाने के लिए विद्यार्थियों को अपने अध्ययन कक्ष में कछुवे का खिलौना या उसकी प्रतिमा रखनी चाहिए। भगवद्गीता में दिये कछुवे के उदाहरण को जीवन में प्रयोग करने वाला व्यक्ति किसी शंका के बिना निश्चित रूप से अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सदैव अग्रसर होगा।

'मानव सेवा ही ... माधव सेवा'

आर्ष धर्म में बताया गया है।
सह प्राणियों को किसी भी तरह रक्षा की
जाय, तो अनंत पुण्यफल हमें और हमारे परिवार को
मिलेगा। कलियुग वैकुण्ठ के भगवान का
आवास स्थान तिरुमल में रक्तदान
करना परम पवित्र कार्य है।
आपके रक्त से अन्य व्यक्ति का प्राण बचता है।

तिरुमल में रक्तदान कीजिए।

तिरुमल अश्विनी अस्पताल में प्रतिदिन सुबह 8 बजे से
लेकर दोपहर 12 बजे के अंदर
कोई भी रक्तदान कर सकता है।

दूरभाष - 0877-2263601

आइये ... रक्तदान कीजिए!
संकटग्रस्त व्यक्ति को सहायता कीजिए!!

सर्वव्यापी भगवान के प्रति समर्पण

- श्रीमती अंकुश्री

मनुष्य अपनी गतिविधियों के परिणाम से जब असंतुष्ट होता है तो उसे घबराहट होने लगती है। वह सोचता है कि इतना सब करने पर भी उसे अपेक्षित उपलब्धि नहीं मिल पायी। आखिर क्यों? बहुत सारे लोग कम परिश्रम से अधिक उपलब्धियाँ हासिल कर लेते हैं, जबकि अनेक लोग अथक परिश्रम और लगनपूर्वक प्रयास करने के बाद भी सफल नहीं हो पातें। ऐसे लोग अपनी अनुपलब्धियों के बारे में सोचते हैं और उसके लिये चिंतित भी होते हैं।

ऐसा सोचना और चिंता करना स्वाभाविक है। मनुष्य की अधिकतर सोच और चिंता भौतिक संसाधनों के लिये होती है। किन्तु भौतिक उपलब्धियाँ मनुष्य का अंतिम लक्ष्य नहीं है। इस भौतिकवादी युग में उपलब्धियों की सीमा नहीं है। एक वस्तु की प्राप्ति के बाद तुरंत दूसरी वस्तु की इच्छा जागृत हो जाती है और उसके लिये चिंता सताने लगती है। यह मनुष्य का सहज और स्वाभाविक गुण है। भौतिक उपलब्धियों की न सीमा है और न उनकी चाहत का अंत।

किन्तु भौतिक उपलब्धियों की चाहत में उलझा मनुष्य जब आध्यात्मिकता की ओर झुकता है तो उसकी चाहत सिमटने लगती है। चाहत की उसकी सोच बदल जाती है। आध्यात्मिकता से जुड़ते ही इन्द्रियाँ भौतिक सुखों की ओर से सिमटने लगती हैं और मन का भटकाव आत्मकेन्द्रित होने लगता है। आत्मकेन्द्रित होते ही मनुष्य का सारा सुख मनोगामी हो जाता है। आध्यात्मिकता की ओर झुकते ही मन भगवान के प्रति अस्थावान हो जाता है। यह एक सहज प्रक्रिया है, जो स्वतः आगे बढ़ती जाती है।

मनुष्य की आस्था जब भगवान के प्रति झुक जाती है, तब भले भगवान नहीं मिल पायें अथवा उनका दर्शन नहीं हो पाये, किन्तु भौतिकवादी प्रवृत्ति आध्यात्मिक बनने लगती है। इसका सबसे बड़ा लाभ असंतोष का दूर होना है। धीरे-धीरे उसकी उपलब्धियों का मापदण्ड बदलने लगता है और वह संतोष का अनुभव करने लगता है। तब भगवान के सर्वव्यापी रूप का अर्थ स्पष्ट होने लगता है। इसके बाद भगवान के प्रति उसकी आस्था बढ़ने लगती है और उसकी उपलब्धियाँ बदलने लगती हैं। भगवान कण-कण में व्याप्त है। वे सर्वव्यापी हैं। भगवान ही प्रकृति हैं। प्रकृति ही पर्यावरण है। प्रकृति और पर्यावरण का हर घटक भगवान की कृपा से संचालित है। कण-कण इनसे प्रभावित है इनमें समाहित है। भगवान श्रीकृष्ण ने अपने विराट रूप में दर्शाया है कि ब्रह्माण्ड की हर वस्तु हो या प्रकृति की हर इकाई हो, सारी उन्हीं में समाहित हो रही है। इससे उनकी सर्वांतर्यामी की व्याप्ति प्रमाणित होती है।

जब भगवान कण-कण में व्याप्त हैं, वे सर्वव्यापी हैं तब इनकी खोज हेतु भटकने की

आवश्यकता नहीं है। भगवान की खोज में कहीं ढूँढ़ना, उनकी सार्वव्यापिकता पर प्रश्न है। उस सर्वव्यापी की गवाही का सबसे उत्तम स्थल मनुष्य का तन है, जहाँ उसके मन का वास है। लेकिन मन का वास कहना समुचित नहीं लगता, क्योंकि मन भटकता रहता है। मन का यह भटकाव तन से बाहर होता है। हवा, ध्वनि आदि से भी तेज गति से मन भटकने लगता है। मन को भटकने से रोकने का सक्षम साधन 'योग' है। योगी अपनी मन के भटकाव को नियंत्रित करता है। यह नियंत्रण जितना सटीक होते जाता है, योगी भी भगवान की ओर उतनी ही तेजी से अग्रसर होते जाता है। धीरे-धीरे वह सर्वव्यापी भगवान को अपने में भी व्याप्त पाने लगता है।

जब हम आंखें बंद कर लेते हैं तो कहीं कुछ दिखाई नहीं देता। ध्यान की भी यही स्थिति है, चारों तरफ शून्य ही शून्य दिखाई देता है। उस अंधकार और शून्य में प्रकाश को देखना एक अद्भुत अनुभूति है। यही अनुभूति जब बढ़ जाती है तो योगी अथवा साधक प्रकाश अथवा बिन्दु की जगह अपने इष्टदेव अथवा गुरुदेव का दर्शन करने लगता है। यह दर्शन सर्वव्यापी भगवान का दर्शन है।

ऐसी स्थिति में पहुँचने के बाद साधक सुख का अनुभव करने लगता है। उसे भौतिक उपलब्धियों में सुख की अनुभूति कम अथवा नहीं के बराबर होती है। भगवान के सर्वव्यापी गुण का उसे आभास होने लगता है। धीरे-धीरे वह बाह्य जगत से सिमटकर अंतर्मुखी हो जाता है। अंतर्मन से भगवान से जुड़ने का उसका प्रयास बढ़ जाता है।

अंतर्मन से भगवान से जुड़े रहने पर भगवान की अनुकम्पा की अनुभूति होने लगती है। ऐसी अनुभूति की प्राप्ति के लिए घर-परिवार छोड़कर वन-वन भटकने की आवश्यकता नहीं है। यदि भगवान के प्रति सही आस्था है तो मिली हुई भौतिक सुख-सुविधाओं के बीच रह कर भी भगवान की खोज की जा सकती है और उनसे साक्षात्कार हो सकता है। परिवार का त्याग करना सुख की खोज की दिशा नहीं है, बल्कि यह दिशा का भटकाव है। परिवार का हर सदस्य भगवान का अंश है ऐसी भावना आस्था को बढ़ाती है, जिससे भगवान से निकटता बढ़ती है और परिवार के प्रति प्रेम बढ़ता है। भगवान का वास इसी प्रेम के अधीन है। इससे भी उनकी सार्वव्यापकता का बोध शुरू होता है।

तामसी अथवा राजसी मनुष्य द्वारा भी विविध कर्म किये जाते हैं- ऐसे लोग शराब पीते हैं। अभक्ष्य भोजन खाते हैं, अति निद्रा और अनिद्रा से ग्रस्त रहते हैं तथा अनेक प्रकार की चाही-अनचाही गतिविधियों में संलिप्त रहते हैं। ऐसे लोगों द्वारा यह कहना कि भगवान चूंकि सर्वव्यापी हैं, इसलिए उनकी हर गतिविधि भगवान के लिये समर्पित है - गलत होगा, समर्पण कहने से नहीं, करने से होता है। इसके लिये समर्पण की भावना होनी चाहिये। समर्पण से ही भगवान के सर्वव्यापी रूप की अनुभूति होती है और समर्पित मनुष्य राजसी, तामसी (अथवा सात्विक) नहीं रह कर मात्र समर्पित मनुष्य रह जाता है।

श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामीजी का मंदिर, तरिगोंडा
ब्रह्मोत्सव कार्यक्रम

दिनांक	वार	दिन के उत्सव	रात के उत्सव
12-03-2019	मंगल	--	अंकुरार्पण
13-03-2019	बुध	ध्वजारोहण	--
17-03-2019	रवि	--	गरुडवाहन
20-03-2019	बुध	रथ-यात्रा, मोतीवितान वाहन	--
21-03-2019	गुरु	तीर्थवारि अवभृथोत्सव, चक्रस्नान	ध्वजावरोहण

स्नान की महत्ता

श्री डी.चैतन्यकृष्ण

मनुष्य प्रातःकाल स्नान के पश्चात् यज्ञ, जप, पूजा आदि समस्तकर्मों के योग्य बनता है। 'शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्' वचन के अनुसार धर्मसाधनभूत शरीर को सभी प्रकार के रोगों से, अशुद्धता से बचाने के लिए स्नान की परमावश्यकता है।

''प्रातः स्नानं प्रशंसन्ति, दृष्टादृष्टकरं हि तत्।
सर्वमर्हति शुद्धात्मा, प्रातःस्नायी जपादिकम्।''

प्रातः स्नान से दृष्टादृष्ट फल शरीर की स्वच्छता, पापनाश तथा पुण्यप्राप्ति - ये दोनों प्रकार के फल मिलते हैं। विशेषकर शुद्धतीर्थों में किया हुआ स्नान अधिक फल प्रदाता होता है। स्नान करनेवालों को रूप, तेज, बल, पवित्रता, आयु, आरोग्य, निर्लोभता, दुःस्वप्ननाश, तप और मेधा - ये दस गुण प्राप्त होते हैं।

गुणा दश स्नानपरस्य साधो!, रूपञ्च तेजश्च बलं च शौचम्।
आयुष्यमारोग्यमलोलुपत्वं, दुःस्वप्ननाशश्च तपश्च मेधाः।।

वेदों, शास्त्रों में कहे गये समस्त कार्य स्नानमूलक हैं, अतएव लक्ष्मी, पुष्टि एवं आरोग्य की वृद्धि चाहने वाले मनुष्य को स्नान सदैव करना चाहिये।

स्नान के भेद - मन्त्र, भौम, अग्नि, वायव्य, दिव्य, वारुण, मानसिक- ये सात प्रकार के स्नान हैं। 'आपोहिष्ठा' इत्यादि मन्त्रों से मार्जन करना मन्त्रस्नान, समस्त शरीर में मिट्टी लगाकर स्नान करना भौमस्नान, भस्मलगाना अग्निस्नान, गाय के खुर की धूलि लगाना वायव्यस्नान, सूर्य किरणों में, वर्षा के जल से स्नान करना दिव्यस्नान, जलमें डुबकी लगाकर स्नान करना वारुणस्नान, आत्मचिन्तन करना मानसिक स्नान कहा गया है।

''मान्त्रं भौमं तथाग्नेयं वायव्यं दिव्यमेव चा''
वारुणं मानसं चैव सप्तस्नानान्यनुक्रमात्।।''

(आचारमयूख, ४७-४८, प्रयोग पारिजात)

अशक्तों के लिए स्नान - स्नान करने में असमर्थ होने पर सिर के नीचे से अथवा गीलेवस्त्र से शरीर को पोंछ लेना भी एक प्रकार का स्नान कहा गया है-

अशिरस्कं भवेत् स्नानं स्नानाशक्तौ तु कर्मिणाम्।
आर्द्रेण वाससा वाऽपि मार्जनं दैहिकं विदुः।।

उषा की लाली से पहले ही स्नान करना उत्तम माना गया है। इससे प्राजापत्यका फल प्राप्त होता है।

श्री वैखानस कल्पसूत्र में अशक्तों के लिए स्नान क्रिया के बारे में इस प्रकार बताया गया है-

अशक्तं नित्यं पादौ प्रक्षाल्याचम्य अतोदेवादि वैष्णवं
जप्त्वा दिव्यं वायव्यमाग्नेयं मन्त्रस्नानं वा कृत्वा
पूर्ववदाचमनादीनि कुर्यात्।''

अर्थात् अशक्त लोग पैर धोकर, आचमन कर, अतोदेवादि मन्त्र जप करके दिव्य, वायव्य, आग्नेय अथवा मन्त्रस्नान करके आचमन करें।

दिव्यस्नान - दिन में वर्षा होने पर उसमें, स्नान करना गङ्गाजल से प्रोक्षणादि दिव्यस्नान कहलाता है।

वायव्यस्नान - गायों के पैरों से हवा के द्वारा जो धूलि उडती है, उसमें स्नान करना (स्पर्श) वायव्यस्नान कहलाता है।

आग्नेयस्नान - भस्म से शरीरलेपन आग्नेयस्नान कहलाता है।

मन्त्रस्नान - ''आपोहिष्ठा'' मन्त्र से आग्नेयतीर्थ से अभ्युक्षण मन्त्रस्नान कहलाता है।

जलकी सापेक्ष श्रेष्ठता - कुएँ से निकाले हुए जल से झरने का जल, उससे सरोवर के जल, उससे नदी के जल, उससे तीर्थ का जल और उससे गंगाजी का जल अधिक श्रेष्ठ माना गया है।

''निपानादुध्दृतं पुण्यं ततः प्रस्रवणोदकम्।
ततोऽपि सारसं पुण्यं ततो नादेयमुच्यते।।
तीर्थतोयं ततः पुण्यं गङ्गातोयं ततोऽधिकम्।।

(अग्नि पुराण)

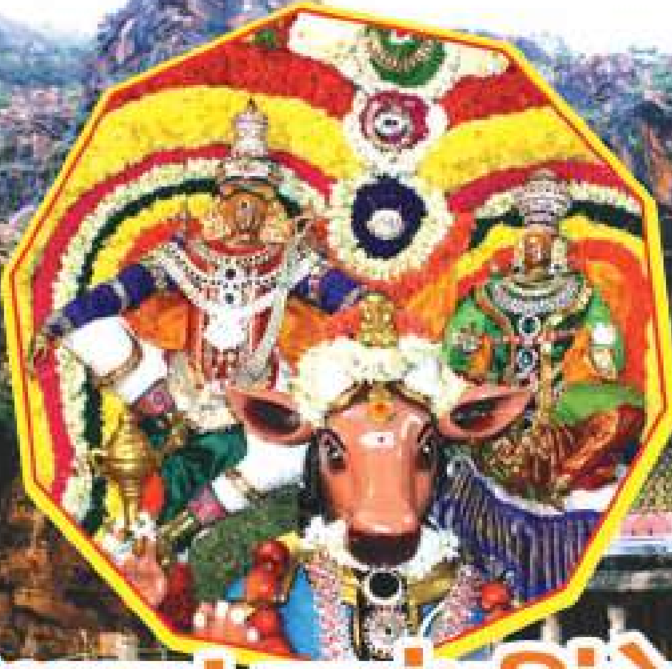

कपिलेश्वरा! स्वयंभूलिंगेश्वरा!!

तेलुगु मूल - श्रीमती ईतकोटि मुनेम्म मुत्तुकृष्णन्

हिन्दी अनुवाद - डॉ.जे.सुजाता

कपिल महामुनि पूजित लिंगम्, सकल सुरासुर वंदित लिंगम्।
भुवि जन रक्षण कारण लिंगम्, समत महाकपिलेश्वर लिंगम्।

स्थल पुराण

कपिलेश्वर महालिंग का आविर्भाव

पाताल लोक में 'भोगवति' नाम से प्रसिद्ध गंगा नदी के तट पर स्थित, अपने आश्रम में कपिल महर्षि, एक शिवलिंग की आराधना किया करते थे। वह शिवलिंग विचित्र कान्ति से चमकती रहती थी। ऐसा चमकते रहने के साथ-साथ, दिन ब दिन वह लिंग अत्यद्भुत रूप से, ऊर्ध्वमुखी होकर बढ़ते हुए, पृथ्वी को चीरकर, आखिरकार वेंकटाचल क्षेत्र मूल में स्वयंभू बनकर उद्भवित हुई। इस प्रकार और भी बढ़ते हुए उस अद्भुत शिवलिंग को, बढ़ने से रोकने की संकल्पना करके, श्री महाविष्णु ने गोपाल के रूप में, तथा ब्रह्मदेव स्वयं कपिलधेनु का रूप धारण करके, उस शिव लिंग को अनंत क्षीरधाराओं से अभिषिक्त करते हुए दोनों ने कई प्रकार से प्रार्थना की। इस प्रार्थना के कारण पाताल लोक से विपरीत बढ़ती हुई वह शिवलिंग वेंकटाद्रि पर्वत मूल में बने गुफा में स्वयंभू बनकर खडी हो गयी।

पाताल लोक से पृथ्वी को चीरकर निकली हुई उस शिवलिंग के साथ, बगल में स्थित 'भोगवति' गंगा भी उभरी है। इस प्रकार बढ़ती हुई, आविर्भूत उस पाताल शिवलिंग को, वहीं पर उभरी भोगवती के तीर्थजल से, सारी देवताओं ने अभिषेक करके, पूजा की।

पाताल लोक में सबसे पहले कपिल महर्षि के द्वारा इस शिवलिंग की पूजा करने के कारण, शिवजी को 'कपिलेश्वर' और 'कपिलेश्वर महालिंग', जैसे पसिद्ध नाम बने। उसी प्रकार इस कपिलेश्वर सन्निधि में उभरे हुए 'भोगवति' गंगा, 'कपिलतीर्थम्' नाम से परम पावन, तीर्थराज के रूप में ख्याति प्राप्त करके, उस जल में स्नान करनेवाले सभी को घोर पापों से मुक्ति प्रदान करते हुए, उन्हें पुनीत बना रही है।

इस कपिलतीर्थ में विलसित श्री कामाक्षी समेत श्री कपिलेश्वरस्वामीजी भक्तजनों का आर्त रक्षक बनकर, समस्त पापों का परिहार करके, सकल सौभाग्य प्रदान कर रहा है।

कपिलतीर्थ का चरित्र

वैष्णव मताभिमानी अच्चुतरायलुजी ने श्री वेंकटेश्वर स्वामी के अत्यन्त प्रीतिकर इस क्षेत्र का नाम जो कपिलतीर्थ है, उसे विस्मृत कराकर, 'सुदर्शन चक्रतीर्थ' नाम से ख्याति प्रदान की। इतना ही नहीं, २५-६-१५३१ में इस पुष्करिणी के चारों दिशाओं में, 'तिरुवालिक्कल्' नाम से बुलानेवाले चार सुदर्शन चक्र शिला यन्त्रों को प्रतिष्ठित करके, इस तीर्थ का नाम 'चक्रत्ताल्वार तीर्थ' तथा, 'आल्वारतीर्थ' जैसे सार्थक नाम प्रदान की।

कपिलेश्वरालय में प्रवेश करने से लेकर प्रदक्षिणा मार्ग में स्थित समस्त परिवार देवताओं के बारे में अब जानेंगे।

मुख मण्डप - श्री कपिलेश्वर स्वामी आलय मुख मण्डप के बाहर, श्री स्वामीजी के सामने ऊँची ध्वज स्तम्भ है, उस ध्वजस्तम्भ के निकट पश्चिम दिशा में 'बलिपीठम्' उपस्थित है। प्रधान आलय के प्रवेश द्वार के दोनों तरफ स्थित शिवशंकर के द्वारपालकों के नाम 'दिण्डी' और 'मुण्डी' हैं।

इनसे आगे जाने पर 'मुख मण्डप' आती है। एक पंक्ति में लगातार पाँच स्तम्भ के हिसाब से, तीन पंक्तियों में कुल मिलाकर पन्द्रह स्तम्भों से निर्मित सुविशाल इस मुख मण्डप के शिला स्तम्भों के ऊपर, कामधेनु अपने क्षीर से कपिलेश्वर लिंग का अभिषेक करता हुआ, भक्त कन्नप्पा द्वारा पूजा करनेवाला श्रीकालहस्तीलिंग, हनुमन्त, नन्दीश्वर, चतुर्भुज गणपति, मयूर वाहन पर विराजित कुमारस्वामी, अनेक महर्षि तथा योगी आदि के शिल्प उकेरी गई हैं। इस मुख मण्डप में श्री कपिलेश्वर महालिंग के सामने, स्वामी के अभिमुख नंदीश्वर का शिला विग्रह, तथा श्री कामाक्षीदेवी के सामने सिंहवाहन प्रतिष्ठित की गयी है। गर्भालय में प्रवेश करनेवाले द्वार के दोनों तरफ, उत्तर दिशा में 'द्वारगणपति', दक्षिण दिशा में 'द्वार कुमारस्वामी' की शिला मूर्तियाँ देखने को मिलती हैं।

मुख मण्डप से आगे जाने के बाद ६×७×७ के विस्तार का गर्भालय है। इस गर्भालय का केवल शिलाद्वारबन्धन ही है। इस शिलाद्वारबन्धन का कोई दालान नहीं है। गर्भालय के मध्यभाग में पश्चिमाभिमुख दिशा में स्वयंभू बनकर अर्चारूप में, महालिंग का रूप धारण करके श्री कपिलेश्वरस्वामी उद्भवित हुए हैं। भू उपरितल से पानवट्टं सहित इस शिला लिंग की ऊँचाई तीन फुट है। इस महालिंग का मूलभाग चाँदी जैसा सफेद वर्ण में, मध्यभाग सुवर्ण कांति से सोने जैसा पीले वर्ण में, ऊपरी भाग ताँबे जैसा लाल वर्ण में चमकती रहती है। इतना ही नहीं, यह शिवलिंग, पश्चिम, उत्तर, पूरब, दक्षिण तथा ऊर्ध्व दिशाओं में पंचमुखी रूप धारण करके दर्शन देती है। पश्चिमाभिमुख दर्शन देनेवाले कपिलेश्वर लिंग मूर्ति को 'सद्योजातमूर्ति' कहते हैं। इसका अर्थ इच्छाओं को तुरन्त पूरा करनेवाला।

युगयुगों में प्रसिद्ध देव, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर इत्यादि से ही नहीं, बल्कि महर्षियों, पंडितों तथा पूरे मानव जाति के द्वारा आराधना की जानेवाली महा महिमान्वित लिंग यह ''श्री कपिलेश्वर महालिंग'' है। श्री कपिलेश्वरस्वामी की देवेरी पार्वती देवी इस क्षेत्र में 'कामाक्षीदेवी' नाम से जानी जाती है।

परिवार देवता मण्डप में स्थित देवता मूर्तियाँ

यह परिवार देवता मण्डप, श्री कामाक्षी कपिलेश्वर सन्निधि के दक्षिण दिशा में स्थित है। परम शिवजी के परिवार में अत्यन्त प्रधान शरणार्थी प्रकृष्ण शिव भक्त, निरन्तर शिव ध्यान करनेवाला श्री चण्डिकेश्वर स्वामी है। यह स्वामी, श्री कामाक्षी कपिलेश्वर के प्रदक्षिणा पथ में, सोमसूत्र के पास, ध्यान निमग्न मूर्ति के रूप में दक्षिणाभिमुख बनकर विराजित हुए हैं। परिवार देवता मण्डप में दक्षिणाभिमुख दिशा में उपस्थित होकर, सर्वप्रथम साक्षात्कार देनेवाले स्वामी 'श्री मेधा दक्षिणामूर्ति' हैं। यह स्वामी सकल जगद्गुरु मूर्ति के रूप में ख्याति प्राप्त ज्ञानप्रदाता हैं। इसके बगल में कालभैरवस्वामी स्थानक भंगिमा में उपस्थित हैं। इसकी बाई ओर 'महाशास्ता' दर्शन देते हैं। 'शास्ता' का अर्थ है शासन करने वाला। शैव क्षेत्र में किसी भी प्रकार के भूत प्रेत पिशाचादि गण प्रवेश न कर सकें तथा वे भक्तजन को बाधा न पहुँचा सकें, ऐसा उनको शासित करने वाला ही ''महाशास्ता'' है। इसी मण्डप में, दीवार से सटी हुई

चपटे पर, लिंगरूप में, पश्चिममुखी श्री काशी विश्वेश्वरस्वामी अर्चामूर्ति के रूप में विराजित हैं। इसके बगल में पश्चिमाभिमुख से श्री उमामहेश्वर स्वामी दर्शन दे रहे हैं। इसकी बायी ओर, माने दक्षिण दिशा में श्री रामलिंगेश्वर स्वामी, शिवलिंग रूप में पश्चिमाभिमुखी बनकर दर्शन दे रहे हैं। इसकी दक्षिण दिशा में पश्चिमाभिमुखी होकर, बैठी हुई मुद्रा में चतुर्भुज रूपी, मूषिकवाहन समेत दर्शन देनेवाले शिलामूर्ति ''श्री प्रथम गणपति'' हैं। पश्चिमाभिमुखी होकर दक्षिण दिशा के अन्त में, खडी हुई मुद्रा में दर्शन देनेवाली शिलामूर्ति ''श्री शिवसूर्यस्वामी'' की है। उत्सव प्रतिमा मण्डप के बगल में, विशेष रूप से श्री सुब्रह्मण्येश्वर स्वामी की सन्निधि स्थित है। इसमें स्वामीजी श्री वल्ली देवसेना समेत विराजित हैं। इस सन्निधि के सामने एकान्त सेवा मण्डप है। यहाँ हर रात को सब से आखिर में श्री कामाक्षी कपिलेश्वर स्वामी केलिए एकान्त सेवा की जाती है।

उत्सव प्रतिमा मण्डप में विद्यमान मूर्तियाँ-

परिवार देवता मण्डप में ही, यानि पश्चिम की ओर श्री सुब्रह्मण्यस्वामी सन्निधि से सटकर, उत्तर दिशा में एक लम्बी छडी का खाना है। इसमें उत्सवमूर्तियों से भरा यह मंडप ऐसा लगता है मानो साक्षात् कैलाश ही उतरकर नीचे आयी हो। इनमें कपिलेश्वरस्वामी के अत्यन्त प्रधान उत्सवमूर्ति ''श्री सोमस्कन्दमूर्ति'' हैं। परमशिव के पच्चीस रूपों में यह अत्युत्तम रूप है। ''उमास्कन्दमूर्ति'' माने, उमादेवी (पार्वती) तथा स्कंद (कुमारस्वामी) सहित शिवमूर्ति, एक ही वेदी पर, अविभाज्य रूप में स्थापित किया गया तीन मूर्तियों का समाहार ही ''श्री सोमस्कन्दमूर्ति'' है। इस स्वामी की देवेरी बनकर, विशेष रूप से, दूसरी वेदी पर विराजित होकर, सभी उत्सव, एवं जुलूस तथा कल्याणोत्सवों में सहभागिनी होने वाली श्री कामाक्षी देवी की पंचलोह मूर्ति भी इस मण्डप में है। श्री चन्द्रशेखरस्वामी, श्री मनोण्मणिदेवी का जोडा, और श्री कामाक्षी कपिलेश्वर की मूलमूर्तियों का प्रतिनिधित्व करनेवाली और एक उत्सवमूर्तियों का जोडा भी यहाँ पर है। विविध प्रकार के उत्सव एवं जुलूसों में ये उत्सव जोडी भाग लेती है। शिवसूर्यस्वामी के पीछे स्थित शिला के खाने में विलसित एक और जोडा पंचलोह उत्सवमूर्ति, तथा श्री नटराजस्वामी, श्री शिवकामसुन्दरी देवी, माणिक्यवाचकर नामक भक्त के पंचलोह प्रतिमा भी है। वल्लीदेवसेना सहित कुमारस्वामी का एक और उत्सवमूर्ति भी है। श्री कपिलेश्वर स्वामी का प्रधान हथियार त्रिशूल स्वामी का पंचलोह मूर्ति भी है। श्री चण्डिकेश प्रतिमा की पंचलोह मूर्ति भी है।

श्री कामाक्षी सहित कपिलेश्वर स्वामी के परिवार देवता मण्डप की दक्षिण दिशा में सुविशाल खुले मैदान के चारों ओर स्थित आहाते में कई नाग देवताओं की प्रतिमाएँ, शिवलिंग, सुब्रह्मण्येश्वर स्वामी की प्रतिमाएँ भी हैं। नागुलकट्टा के बगल में पश्चिमाभिमुखी श्री कोटिलिंगेश्वर का मंदिर है। इसमें कोटिलिंगेश्वर का शिवलिंग उपस्थित है। इस शिवलिंग के ऊपर कई छोटी शिवलिंग की मूर्तियाँ हैं। श्री कोटिलिंगेश्वर स्वामी देवालय की दक्षिण दिशा में पश्चिमाभिमुखी अगस्त्येश्वरालय है। इसमें शिवलिंग है। इस मंदिर के बगल में दक्षिण दिशा से सटकर नवग्रह देवताओं का प्रतिष्ठित ऊँचा मण्डप है। नवग्रह देवता मण्डप की दक्षिण दिशा में चार स्तंभों से निर्मित, मंच सहित श्री राहु केतु पूजा मण्डप भी है। इस मण्डप के सामने दो बिल्व वृक्ष हैं। कपिलतीर्थ पुष्करिणी की पश्चिमी तट पर ऊँचे प्रदेश में नरसिंह स्वामी की गुफा है। इसके अन्दर श्री लक्ष्मी नृसिंहस्वामी की एकशिला मूर्ति बसी है। पुष्करिणी की दक्षिण दिशा में ''रंगमण्डप'' है। इसी को ''तीर्थवारि मण्डप'' भी कहते हैं। रंगमण्डप की पश्चिम दिशा के समीप पूरब मुखी श्री वेणुगोपाल स्वामी का मंदिर है। इस मंदिर के पीछे ''श्री कामाक्षी नंदनवन'' नाम का बगीचा है। इस नंदनवन के बगल में 'कल्याणकट्टा'' है। नम्माल्वार मन्दिर के बगल की दक्षिण दिशा में श्री अभयहस्त हनुमान स्वामीजी की शिला प्रतिमा सिन्धूर लेपन के साथ दिखाई पड़ती है।

अभिषेक-अर्चना-उत्सव

स्वामीजी का अभिषेक, दिन में दो बार करते हैं। हर महीने के मासशिवरात्रि के दिन सुबह श्री कपिलेश्वर महालिंग का महान्यास पूर्वक एकादश रुद्राभिषेक करते हैं। आर्द्रा नक्षत्र के दिन कपिलेश्वर स्वामी का 'लक्षबिल्वार्चना'' कृत्तिका

के दिन ''कृत्तिका दीपोत्सव'' मनाते हैं। हर दिन अभिषेक के समय अंत में 'विभूति' से अभिषेक करके 'नीराजनम्' समर्पित करते हैं।

हर सोमवार को, शाम के समय श्री कामाक्षीदेवी सहित श्री कपिलेश्वर स्वामी का डोलोत्सव मनाया जाता है। इसी का नाम ''ऊँजलसेवा'' है। हर महीने को, मासशिवरात्रि के दिन प्रदोष (सायंसंध्या) समय में कल्याणोत्सव मनाया जाता है। हर साल आषाढ़मास में पूर्णिमा से पहले आने वाले चतुर्दशी तक पूरे हों, ऐसा तीन दिन तक पवित्रोत्सव मनाये जाते हैं। आश्वयुज महीने में शुद्ध पाड्यमी से लेकर दशमी तक देवी नवरात्री की पूजाएँ अत्यन्त धूमधाम से मनाये जाते हैं। सूर्यमान के अनुसार तुलामास में पूर्णिमा के दिन अर्थात् आश्वयुज (सितम्बर-अक्तूबर) महीने में हर साल ''अन्नाभिषेक'' नाम से जाने वाला विशेष 'अभिषेकोत्सव' होती है। इस उत्सव को मनाये जानेवाले दिन को विशेष रूप से ''कपिलतीर्थ मुक्कोटि'' नाम से बुलाते हैं।

हर साल कार्तिकमास में आर्द्रा नक्षत्र के दिन 'लक्षबिल्वार्चना' मनाया जाता है। कार्तिक मास में कृत्तिका नक्षत्र के दिन प्रदोष समय में 'कृत्तिका दीपोत्सव' धूमधाम से मनाते हैं। हर साल धनुर्मास के समय 'आरुद्र नक्षत्र' के लगने के पहले दिन समाप्त हों, ऐसा पाँच दिन पुष्करिणी में हर दिन प्रदोष समय में 'प्लवोत्सव' मनाया जाता है। सौरमान के अनुसार हर साल मकरमास के पूर्णिमा से पहले आनेवाले शुक्रवार के दिन-अर्थात् चान्द्रमान के अनुसार 'पुष्यमास' या 'माघमास' (तमिल-तै महीना) में श्री कामाक्षी देवी का 'चन्दनालंकार सेवा' मनाया जाता है। हर साल माघ मास में

महाशिव रात्रि पर्वदिन के संदर्भ में १० दिन तक शैवागमशास्त्रोक्त ब्रह्मोत्सव मनाये जाते हैं।

कपिलतीर्थ तीर्थों का प्राशस्त्य

प्राचीन काल में एक ब्राह्मण पुण्यक्षेत्रों का दर्शन करके, तीर्थों में स्नान करते हुए देशाटन करता था। आखिर इस संसार में जितने भी तीर्थ हैं, उन सभी में स्नान करके मुक्ति पाने के संकल्प से घूमता रहता था। इस प्रकार आराम किये बिना घूमने के कारण वह अत्यन्त कमजोर पड गया। शुष्क शरीर से, थकान के कारण, हल्की सी नींद की अवस्था में चला गया।

उस नींद में वेंकटेश्वरस्वामी प्रकट होकर कहा- हे ब्राह्मणोत्तम! तुम्हारा यह प्रयत्न अत्यंत कठिन है। सिर्फ तुम्हें ही नहीं बल्कि किसी को भी यह कार्य करना असंभव है। कभी भी यह पूरी नहीं होगी। लेकिन वेंकटाचल क्षेत्र में 'कपिलतीर्थम्' से लेकर सत्रह अतिमुख्य पुण्यतीर्थ हैं। उन तीर्थों में शास्त्रोक्त रूप से नियमानुसार स्नान करने पर, विश्व के सभी तीर्थों में स्नान करने का फल मिलता है, इसमें कोई संदेह नहीं है। इसलिए तुम उन सत्रह तीर्थों में स्नान करो। तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी।

उस स्वप्न के अनुसार, ब्राह्मण नींद से जागकर, अपना तीर्थाटन समाप्त करके, वेंकटाचल क्षेत्र पहुँचकर वहाँ पर स्थित कपिलतीर्थ से लेकर पूरे सत्रह तीर्थों में पुण्य स्नान करके मुक्ति प्राप्त की।

कैलास शिखरवास परब्रह्म स्वरूपिणे।
कामाक्षी वल्लभायास्तु कपिलेशाय मंगलम्।।

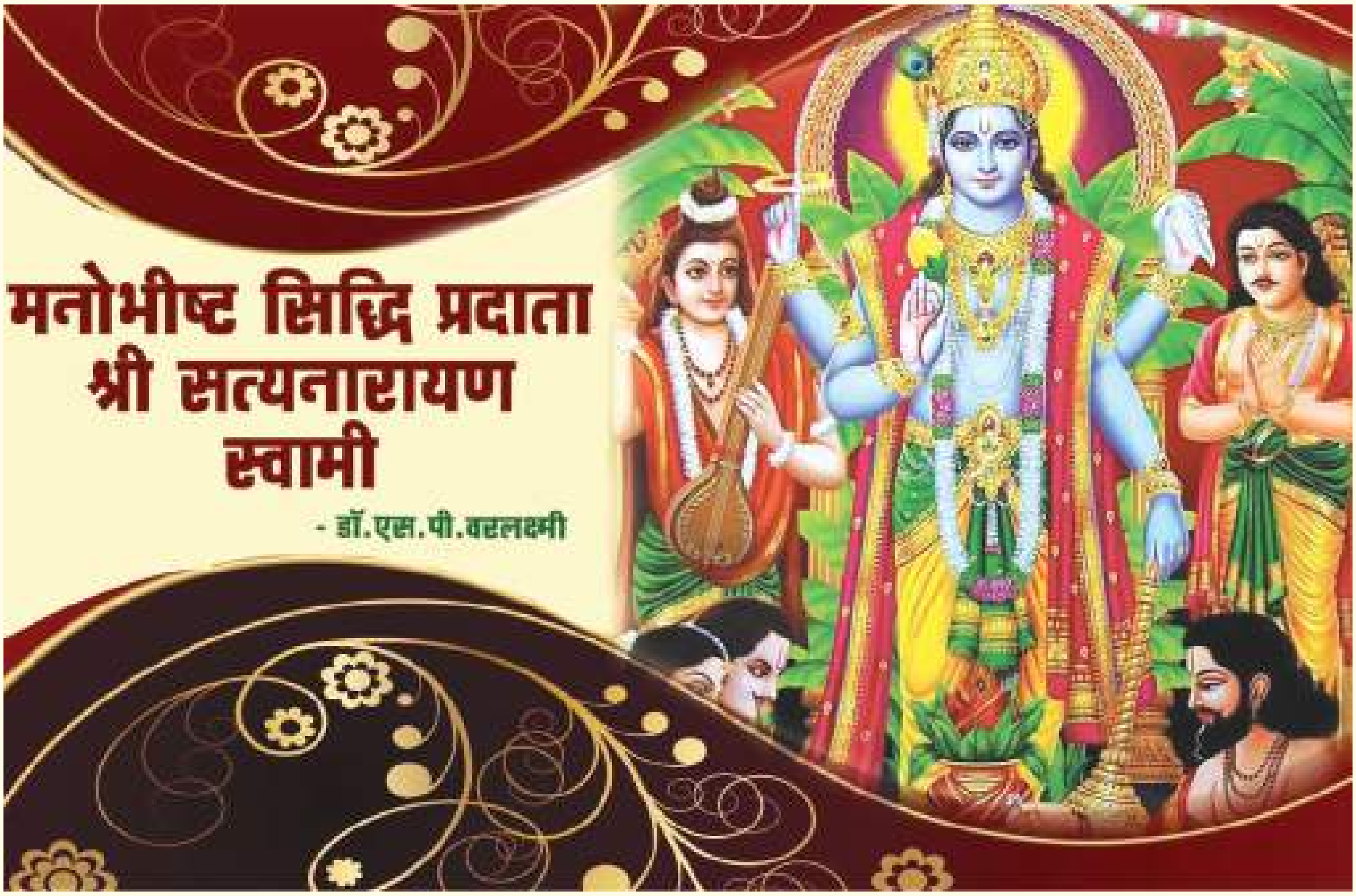

मनोभीष्ट सिद्धि प्रदाता श्री सत्यनारायण स्वामी

- डॉ.एस.पी.वरलक्ष्मी

सत्यदेव के रूप में, रत्नगिरिवासी के रूप में, भक्तों के इष्टदैव के रूप में, मनोकांक्षा परिपूर्ण करनेवाले भक्त वरद के रूप में, सत्यनारायण स्वामी का नाम भक्ति एवं प्रपत्ति के साथ लिया जाता है।

''सत्यनारायणदेवं वंदेहम कामदम प्रभुम्
लीलय विपतं विश्वं एनतस्मै नमोनमः।'' कहकर स्वामी का स्मरण करते हैं।

कभी किसी समय में गोदावरी जिले के अन्नवरम् में श्री अनंतलक्ष्मी समेत श्री वीर वेंकट सत्यनारायणस्वामीजी विराजित हैं। इस मंदिर के निचले मंजिल में श्री विघ्नेश्वर, सूर्यनारायणस्वामी, माँ भगवती, परमेश्वर के बीच में महायंत्रों में दर्शन देते हैं। प्रधानालय ऊपरी मंजिल में है। यहाँ सत्यनारायणस्वामीजी के वाम भाग में अनंतलक्ष्मी भगवती-दायी ओर ईश्वर एक ही वेदी पर दर्शन देते हैं। यहाँ विशेषता की बात है कि एक ही वेदी पर शिव केशव-भगवती का एक ही जगह पर दर्शन देनेवाला मंदिर यही माना जाता है।

सत्यदेव स्थित यह प्रांत रत्नगिरि के रूप में मशहूर है। पौराणिक कथा के अनुसार श्री महाविष्णु, रामावतार में रहते समय रत्नाकर ने तप किया था। वर माँगने के लिए भगवान के कहने पर रत्नाकर ने इस प्रकार विनती की कि ''आपको मेरे सिर पर ढोने का महाभाग्य प्रदान करें।'' कलियुग में भक्तों के संरक्षण के लिए त्रिमूर्तियों के एक स्वरूप में त्रिगुणात्मक ''श्री वीर वेंकट सत्यनारायण'' नाम से आविर्भाव हो जाऊँगा। तब तुम रत्नगिरि के रूप में तुम्हारे सिर पर मुझे वहन करों। ऐसा कहकर भगवान ने वर दिया। इसी प्रकार की एक और कहानी भी पचलित है।

पूरब गोदावरी जिले के पिठापुरम् के नजदीक 'गोरस' गाँव के अधिपति राजा इंनुगंटि वेंकट रामनारायण के शासनकाल में अरिकेंपूडि के समीप ''अन्नवरम्'' नामक गाँव था। उस गाँव में ईरंकि प्रकाशराव नामक एक महाभक्त रहता था। एक दिन श्री महाविष्णु ने प्रकाशराव राजा के स्वप्न में साक्षात्कार देकर इस प्रकार कहा कि 'अगले सावन शुद्ध द्वितीय तिथि, मखा-नक्षत्र में गुरुवार के दिन रत्नगिरि

पर विलसित हो जाऊँगा। शास्त्र नियमानुसार मेरी प्रतिष्ठा करके सेवा करो।' ऐसा कहकर अंतर्धान हुआ।

दूसरे दिन दोनों मिलकर स्वप्न के बारे में समझाकर अन्नवरम् के रत्नगिरि पहाड पर पहुँचे। वहाँ एक झाडी में पाद चिह्न दिखाई पडे। उन पर सूरज की किरणें प्रस्फुरित हुईं। उन दोनों ने सत्वर उस झाडी को निकालकर स्वामी की मूर्ति को प्रतिष्ठित किया। दो मंजिलों में देवालय का रहना यहाँ की विशेषता है। इसके साथ-साथ सत्यदेव के व्रत का निर्वहण यहाँ की महान विशेषता है। पवित्र कार्तिक मास में लाखों सत्यनारायण व्रत मनाये जाते रहते हैं।

श्री सीताराम यहाँ क्षेत्रपालक हैं

मान्यता की बात है कि श्री सीताराम सत्यदेव के क्षेत्र पालक हैं। क्षेत्र रक्षक वनदुर्गा, कनकदुर्गा देवियों के मंदिर यहाँ हैं। भक्त लोग अधिक संख्या में इन मंदिरों का दर्शन करते हैं। सीढियों के मार्ग के प्रारंभ में माता कनकदुर्गा का, तथा पहाड पर वनदुर्गा का मंदिर हैं। आलय के प्रांगण में सीता राम मंदिर है तथा पहाड पर गोकुल है। सत्यदेव के अनुग्रह नैवेद्य की एक विशेषता है। अक्सर अन्य देवालयों में लाडू हल्दी मिश्रित भात भगवत प्रसाद के रूप में भक्तों में बाँटते हैं। अन्नवरम् मंदिर में सिर्फ गेहूँ का कण, घी, शक्कर, इलायची से बने विशेष ढंग का भगवत प्रसाद तैयार करते हैं।

यहाँ कई उत्सव होते रहते हैं

हर साल वैशाख शुद्ध एकादशी पुण्यतिथि को सत्यदेव का कल्याण (विवाहोत्सव) मनाते हैं। भगवान के ये उत्सव सप्ताह दिन के लिए होते हैं। सावन शुक्ल द्वितीया के दिन को स्वामीजी का आविर्भाव होने के कारण हर साल उसे आविर्भाव दिनोत्सव के रूप में बडे पैमाने में मनाते हैं। इस शुभ संदर्भ में विशेष पूजा, अन्य कार्यक्रम मनाते हैं। हर साल कार्तिक मास के शुद्ध द्वादशी के दिन भगवान को नाँव में सजाकर नदी में महोत्सव कराते हैं। कार्तिक पूर्णिमा के दिन गिरिप्रदक्षिणा मनाते हैं। इस पुण्यक्षेत्र के दर्शन करने के लिए दोनों तेलुगु प्रांतों से रेल तथा बस की सुविधा हैं।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

लेखक लेखिकाओं से निवेदन

सप्तगिरि पत्रिका में प्रकाशन के लिए लेख, कविता, रचनाओं को भेजनेवाले महोदय निम्नलिखित विषयों पर ध्यान दें।

१. लेख, कविता, रचना, अध्यात्म, दैव मंदिर, भक्ति साहित्य विषयों से संबंधित हों।

२. कागज के एक ही ओर लिखना होगा। अक्षरों को स्पष्ट व साफ लिखिए या टैप करके मूलप्रति भेजें।

३. किसी विशिष्ट त्यौहार से संबंधित रचनायें प्रकाशन के लिए ३ महीने के पहले ही हमारे कार्यालय में पहुँचा दें।

४. रचना के साथ लेखक धृवीकरण पत्र भी भेजना जरूरी है। 'यह रचना मौलिक है तथा किसी अन्य पत्रिका में मुद्रित नहीं है।'

५. रचनाओं को मुद्रित करने का अंतिम निर्णय प्रधान संपादक कार्य होगा। इसके बारे में कोई उत्तर प्रत्युत्तर नहीं किया जा सकता है।

६. मुद्रित रचना के लिए परिश्रमिक (Remuneration) भेजा जाता है। इसके लिए लेखक-लेखिकाएँ अपना बैंक प्रथम पृष्ठ जिराक्स (Bank name, Account number, IFSC Code) रचना के साथ जोड करके भेजना अनिवार्य है।

७. धारावाहिक लेखों (Serial article) का भी प्रकाशन किया जाता है। अपनी रचनाओं का भेजनेवाला पता- **प्रधान संपादक,**

सप्तगिरि कार्यालय,

ति.ति.दे.प्रेस कांपौन्ड, के.टी.रोड,

तिरुपति – ५१७ ५०७. चित्तूर जिला।

आदिदेव नमस्तुभ्यं... ममजीवन भास्करा!!

तेलुगु मूल - कुमारी एस.लावण्य

हिन्दी अनुवाद - श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण

सप्ताश्वरथमारूढं प्रचंडं कश्यपात्मजम्।
श्वेतपद्मधरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्।।

प्रत्यक्ष दैव श्री सूर्य भगवान समस्त लोकों को रोशनी प्रदान करने वाला भगवान हैं। यह स्वामी आन्ध्र के श्रीकाकुलम् जिले में अरसविल्लि में विलसित हुए। यहाँ के स्थल पुराण के अनुसार इस सूर्यनारायण को देवताओं के राजा इन्द्रप्रजापति ने यहाँ प्रतिष्ठित किया था।

सात घोड़ों के रथ पर स्वामी महा प्रचंड प्रकाश के साथ, पद्मपत्र नयनोंवाले, मकर कुंडल धर कर, दोनों हाथों में सफेद कमल के फूल धारे, सूर्य कठारी के साथ विद्यमान हैं। स्वामी की बायीं तरफ उषादेवी, दायीं तरफ पद्मिनीदेवी, स्वामी के चरणों तले छायादेवी विराजमान हैं। दोनों तरफ पिंगल-मार्तांड और ऊपरी भाग पर सनकसनंदन आदि महर्षियों के साथ गन्धर्व, किन्नर, किंपुरुष तथा अप्सराएँ विराजमान हैं। स्वामी के लिए विश्वकर्मा से निर्मित सोने के रथ पर वैजयंती-रथ की लंबाई ३६ लाख योजना तथा चौड़ाई ९ लाख योजन है।

इस रथ में सूरज भगवान के परिवार के देवतालोग ब्रह्म, रुद्र आदि गणपति और कुमारस्वामी के साथ इन्द्रमयी हैं। स्वामीजी के सात अश्व विद्यमान हैं।

स्वामीजी का वर्णचित्र पद्मपुराण और ऋग्वेद, काश्यप शिलाशास्त्र नियमावली, रूपध्यानरत्नावली, उत्तम दशतल के अनुसार भारतीय चित्रकला संप्रदाय और कलंकारी - चित्रकला के सम्मेलन के साथ चित्रित किया हुआ है।

सूर्यभगवान तीन वेदों के प्रतीक बनकर खडा हुआ है। वे तीन हैं - ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद। इसीलिए स्वामी त्रिमयी कहकर पुकारा जा रहा है।

ऋग्वेद में सूर्य को तमस को हटाने वाला, ज्ञान प्रदाता, समस्त जीविका का आधारभूत, अच्छाई को प्रदान करने वाला, स्वास्थ्य प्रदाता कहकर बताया गया है।

रथसप्तमी मुख्यतया सूरज की आराधना का त्यौहार है। रथसप्तमी को सूर्यजयंती भी कहते हैं। कुछ प्रान्तों में सौर-सप्तमी, भास्कर-सप्तमी, जयंती, महासप्तमी भी कह कर आनंद और उल्लास के साथ मनाते हैं। यह त्यौहार सूर्यजयंती के नाम पर ज्यादा प्रसिद्धि पाया हुआ है क्योंकि परमात्मा ने सूरज की सृष्टि माघ-शुद्ध-सप्तमी के दिन की थी। इस सप्तमी को सूर्य-जयंती, सूर्य मातृका भी कहा जाता है क्योंकि सूरज अदिति-कश्यपों के पुत्र के रूप में माघ शुद्ध सप्तमी के दिन पर ही जन्म लेकर आया था।

द्वादश आदित्य

सूरज को श्री सूर्यनारायण भी कहा जाता है। यानी सूर्य 'नारायण स्वरूपी' हैं। (विष्णु पुराण, भगवद्गीता) श्रीमन्नारायण स्वरूपवाले सूरज एक-स्वरूप होने के बावजूद, काल-देश-क्रिया आदि भेदों के कारणवश बारह रूपों में विभाजित होकर, एक-एक माह में एक-एक रूप-भावना के साथ प्रकाशित होते हुए, एक-एक नाम संयोग के साथ पुकारा जाता होता है। वे यह कि, चैत्र महीने में-धाता, वैशाख-आर्यम, ज्येष्ठ-मित्र, आषाढ़-वरुण, सावन-इन्द्र, भादों-विवस्वंत, अश्विन-त्वष्टा, कार्तिक-विष्णु, अगहन-तर्यम, पूस-भग, माघ-पूष और फागुन-क्रतु।

मानवों से ही नहीं, बल्कि सुरासुरों से भी आराधित होता है सूर्य भगवान। सुप्रसिद्ध गायत्रीमंत्र सूर्य-तेज की महिमा पर ही लिखा गया था, जिसे ब्रह्मर्षि विश्वामित्र ने बताया था। श्रीराम के द्वारा दुर्दान्त राक्षस रावण का संहार इसलिए साध्य था कि भगवान राम ने आदित्य-हृदय का जप किया था। महाभारत में पांडवों ने भी सूर्य भगवान की आराधना कर उसके अनुग्रह से अक्षयपात्र को पाकर, अरण्यवास के समय में अपने साथ, अपने अनुचरों की अन्न-समस्या का हल निकाल कर, बेझिझक अतिथियों का खूब सत्कार करते हुए धन्यजीवी बने थे। सत्राजित महाराजा ने भी श्यमंतकमणि को हासिल करने के लिए सूर्योपासना की थी। आज पुराणों का प्रबोध होता रहा है कि अरुणोदय काल में स्नान कर सूरज भगवान की पुण्य आराधना करना महा पुण्यदायक होगा, वह बहुत ही स्वास्थ्यदायक, अकाल मृत्यु का परिहारक होगा। मरणानंतर ऐसे मनुष्य सूर्य-लोक का वास पावेंगे। रथसप्तमी महापर्व के दिन सूर्योदय काल में आकाश में नक्षत्र मंडल रथ के आकार में दिखाई देता है। इसी कारणवश उत्तरायण के माघ-शुद्ध सप्तमी का दिन ''रथसप्तमी'' कहलाता है, क्योंकि आसमान में नक्षत्रों का रहन कुछ रथाकार में होता है।

जपा और बेर के पत्रों का प्राशस्त्य

रथसप्तमी के दिन शिरोस्नान में जपा तथा बेर के पत्तों को सिर पर, भुजाओं पर, हाथों पर धर कर स्नान करना चाहिए। सूर्य की किरणों में निहित प्राणशक्ति को अत्यधिक मात्रा में अपने में समाये रखने की हरितशक्ति इन जपा व बेर के पत्तों में होती है। जपा के पत्तों को संस्कृत भाषा में अर्क पत्र कहते हैं। वैसे सूरज महानुभाव को 'अर्क' नाम से भी बुलाते हैं। अतएव यह पत्र उष्णकारी है। आयुर्वेद में यह पत्र सर्वरोग-निवारिणी बनकर व्यवहृत होता आ रहा है। ठीक इसी ढंग से बदरी के पेड़ के पत्तों का भी महत्व होता है। उनका भी यही लक्षण है। वैसे बेर और जपा के पत्रों में सूरज की किरणों की प्राण शक्ति का अधिकाधिक निक्षिप्त हो रखने की शक्ति होने के कारण, इन्हें सिर, भुजाओं और शरीर पर धर कर स्नान करने सांप्रदायिक आचरण पनपा है। उनके स्पर्शमात्र से शिरोभाग में सहस्रार कमल का उद्दीपन होता है, नसें उत्तेजित होती हैं, तथा मनुष्य में अलौकिक चेतना जागृत होती है। यह मानसिक दृढ़ता, याददाश्त शक्ति को बढ़ावा देता है। शरीर से संबन्धित रुग्मताओं का नाश होता है। इस रथसप्तमी के महापावन पर्व के उपलक्ष्य में सेम से रथ का चित्र बनाकर, उसके बीच पान के पत्ते पर सूरज के बिंब को बनाकर, भगवान की पूजा करना कुछ लोगों का अनादि से आचार रहा है।

माघ माह की प्रशस्ति

उत्तरायण का समय मकर-संक्रमण से ही प्रारंभित क्यों न हो, लेकिन रथसप्तमी के पावन पर्व से ही उत्तरायण के आगमन का पूर्ण गोचर होता है। इसी शुभ अवसर के साथ ही वास्तव में गर्मियाँ का आरंभ हो जाती हैं। इस दिन से उत्तरी दिशा में सूरज भगवान का प्रकाशन होने के कारण इसे सूर्यग्रहण के समान मान कर, तर्पण आदि क्रियाओं को करने का आचरण का निर्णय कर दिया था बुजुर्गों ने। उत्तरायण का माघ मास मानवमात्र को उन्नत ज्ञानमार्ग में यात्रा करने पर प्रेरित कर, भगवत्साक्षात्कार की प्राप्ति को प्राप्त बनायेंगे।

आरोग्य प्रदाता - आदित्य

सूर्योपासना के कारण, सूर्य-नमस्कारों से, सूरज के आगे खड़े हो जाने पर शरीर को असमान स्वास्थ्य मिलती है। आत्मशक्ति को बढ़ावा मिलेगा, नेत्रशक्ति की बढोत्तरी, हृद्रोग के निवारण के लिए सूर्य ही आराध्य भगवान है। सूरज स्वास्थ्य के प्रदाता हैं। सूर्य की कांति में उपलब्ध नीले रंग के किरणों के प्रभाव से ही हमारा शरीर अत्यंत सहजसिद्ध ढ़ंग से विटामिन 'डी' को उपजता है। इस विटामिन के लोप के कारण शरीर में हड्डियों का बढ़ना कम हो जाता है। इसी कारण हमारे बुजुर्गों ने सूर्योदयानंतर बालसूर्य की कोमल धूप में भीगते हुए सूर्य-नमस्कार करने की आदत बनाने की सलाह देते रहते हैं। सूर्य की रश्मि में व्यायाम करने पर भी जोर दिया गया है।

लोक - पोषक - सूरज

इस सृष्टि की सभी जीव-राशियाँ अपने-अपने काम-काज के प्रयोजन के वास्ते प्रत्यक्ष या परोक्ष ढंग से सूर्यभगवान पर निर्भर करती आ रही हैं। पौधे और वृक्ष अपनों में सूरज की रश्मि के द्वारा किरण-जन्य-संयोग प्रक्रिया के द्वारा अपना आहार तैयार करते हैं। शाखाहार जीव सभी अपने अन्न-संपादन के लिए पेड-पौधों, घास-फूस पर निर्भर करते हैं। अब मांसाहारी प्राणी जिन्दा रहने के लिए मांसाहारी प्राणियों को ही खाकर जीवन बिताते हैं। इस तरह प्राणियाँ-सब आहार-संपादन के वास्ते केवल आदित्य पर ही आधारित होते हुए हम देख रहे हैं। इस प्रकार सूरज लोक-पोषक बना हुआ है।

सूर्य-रथ का एक ही पहिया होता है। उस पहिए के छः पत्ते होते हैं। उस रथ के घोड़े सात होते हैं। सूरज का रथ-चालक अनूर है, जो विनता और कश्यप प्रजापति की प्रथम संतान है। सूर्य का रथ आसमान में निरंतर घूमता करता रहता है। सूरज के मूलभूत गुण रोशनी बिखेरना तथा गर्मी उछलना ही हैं। यह सूरज का भौतिक रूपदर्शन है। सूरज के लिए एक साल ही अपना चक्र होता है। यह सारा संसार ही सूरज का रथ होता है। साल-भर की ऋतुएँ ही सूरज के रथ की पहियों के पत्ते हैं। छंद हीं सात घोड़े हैं। रथसप्तमी से अंधेरापन और सर्दी हटकर, यानी 'माया' हट कर कांति के युग का आरंभ होता है।

तिरुमल पर रथसप्तमी

जान पड़ता है कि श्री तिरुमलेश तथा रथसप्तमी और सप्तमी वाली संख्या के बीच अन्योन्याश्रित-संबन्ध है। तिरुमलेश भगवान सात पहाड़ों पर विराजमान होकर अपने भक्तों पर कृपावृष्टि कर रहा है। सूरज भी अपने सात घोड़ों वाले रथ पर आसीन होकर यान करते हुए-सात अधोलोक और सात ऊर्ध्व लोकों को अपनी कांति की किरणों के संचालन से चेतनायुक्त करता रहता है। ये दोनों स्वामी तमोनिवारक और पाप परिहार के अधिनायक महानुभाव हैं। संचार और सर्वलोक-संरक्षण इन देवताओं के खास लक्षण होते हुए आ रहे हैं। तिरुमलेश वैसे वेंकटनारायण हों, तो आदित्यभगवान सूर्यनारायण हैं। तिरुमलेश भगवान का रथ हिरण्मय हो, तो सूर्य का रथ भी हिरण्मय है। तिरुमल श्रीस्वामी श्रीदेवी और भूदेवी के समेत विराजित रहते हैं। सूर्य भगवान भी छाया और संज्ञादेवी के समेत विराजमान हैं। इस प्रकार लक्ष्मीनारायण अथवा श्री सूर्यनारायण के बीच काफी साम्यताएँ मिलती हैं। तिरुमलेश भगवान के उत्सवों में संपन्न होनेवाले विशेष उत्सवों में रथसप्तमी ने वास्तव में एक विशिष्ट स्थान ग्रहण कर रखा है।

हर वर्ष माघ शुद्ध सप्तमी के शुभ दिन को आने वाली सूर्यजयंती या रथसप्तमी, को तिरुमल में बडे वैभवपूर्ण ढ़ंग से मनाया जाता है। यह एक प्रथा है। उस दिन श्रीवारु दिन-भर सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक अपने विशेष सात वाहनों पर आरूढ़ होकर, चार माड़वीथियों में निरीक्षित भक्तों को दर्शन देते हुए विचरते हैं। इस रूप-संपन्नता को देखने के लिए देश के कोने से भक्तजनों का सागर उमड़ पड़ता है। स्वामी के वे विशेष वाहन हैं - १. सूर्यप्रभावाहन २. लघुशेषवाहन ३. गरुड़वाहन ४. हनुमंतवाहन ५. कल्पवृक्षवाहन ६. सर्वभूपालवाहन ७. चंद्रप्रभावाहन। उस दिन को दोपहर के समय श्री वराहस्वामी के मंदिर के आगे स्थित स्वामी की पुष्करिणी में चक्रत्ताल्वार (सुदर्शनचक्रमूर्ति) का चक्रस्नान संपन्न होता है।

रोज की तरह न हो करके, एक ही दिन श्रीवारु सात वाहनों पर सात बार विविध अलंकारों में, दिव्यशोभाओं के साथ निहारते भक्तों को आशीर्वाद देना एकमात्र रथसप्तमी के महापर्वदिन पर ही संपन्न होता है। यह एक अद्भुत और विशिष्ट महोत्सव है। तभी तो रथसप्तमी उत्सव को अर्ध-ब्रह्मोत्सव या एक-दिन-ब्रह्मोत्सव कहकर भक्तमहाशय श्रद्धापूर्वक स्तुति करते हैं।

इतनी विशिष्टताओं से जता हुआ महा पर्वदिन है- रथसप्तमी। इसीलिए हम सभी को रथसप्तमी के दिन (हर रोज भी) उस सूर्यनारायण की आराधना करनी चाहिए तथा आयुरारोग्य और ऐश्वर्य-सिद्धि प्राप्त करनी चाहिए।

फरवरी महीने का राशिफल

- डॉ.केशव मिश्र

मेषराशि - मासफल सामान्य रहेगा शनि की ढैय्या के कारण। शरीर के ऊपर ध्यान दें वरना कष्ट भोगना पड जाएगा। राजनीति में सफलता मिलेगी। स्थान परिवर्तन का योग है। शनि शान्त्यर्थ मंगलव्रत, सुन्दरकाण्ड पाठ एवं दुर्गासप्तशती पाठ करना श्रेयस्कर होगा।

वृषभराशि - मासफल मिश्रित है। वातकफदोष, उदरपीड़ा मूत्रविकार की संभावना रहेगी। कृषि, व्यापार, शिक्षा, उद्योग एवं राजनीति में बाधाओं से आंशिक सफलता मिलेगी। राहु-केतु की उपासना लाभकर रहेगी।

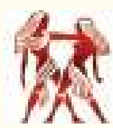

मिथुनराशि - मासफल मिश्रित है। सन्तान सुख अनुकूल तथा परिवारिक सुख में बाधा संभव है। राजनीति, शिक्षा, व्यापार से आंशिक लाभ होगा। व्यर्थ भ्रमण की संभावना बनी रहेगी।

कर्कराशि - मासफल शुभफलप्रदायक है। भ्रमण तीर्थाटन का योग बना हुआ है। शिक्षा, कृषि, उद्योग एवं व्यापार में लाभ होगा। धन का व्यय होगा। राहु-केतु की उपासना लाभकर रहेगी।

सिंहराशि - मासफल मिश्रित है। पारिवारिक सुख अनुकूल एवं सन्तानसुख में कमी रहेगी। चोट एवं पाँव में दर्द संभावित है। आदित्यहृदयस्तोत्र का पाठ करे लाभदायक सिद्ध होगा।

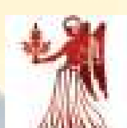

कन्याराशि - इस महीने मिश्रित फल है। पारिवारिक सुख अनुकूल एवं सन्तानसुख में कमी रहेगी। राजनीति में सफलता मिलेगी। नवीन कार्य सम्पादित होंगे। मंगलव्रत एवं दुर्गापाठ करना लाभदायक रहेगा।

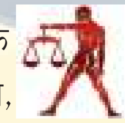

तुलाराशि - मासिक फल शुभद है। पारिवारिक सुख एवं सन्तानसुख अनुकूल रहेगा। तीर्थाटन, स्थानपरिवर्तन का योग बना हुआ है। लम्बे समय से रुके हुए कार्य पूर्ण होंगे।

वृश्चिकराशि - शनि की साढेसाती चल रही है। अतः रक्तदोष, घाव सम्भावित है। पारिवारिक सुख मध्यम एवं सन्तान सुख अनुकूल रहेगा। गोसेवा, मंगलव्रत, दुर्गापाठ अथवा सुन्दरकाण्ड पाठ शनिशान्तयर्थ करवाना चाहिए।

धनुराशि - शनि की साढेसाती चल रही है। अतः रक्त-वात-कफ दोष, उदरपीड़ा, घाव या चोट लगने की संभावना है। स्थान परिवर्तन, धन व्यय, व्यर्थ भ्रमण एवं शत्रुबाधा संभावित है।

मकरराशि - मासफल शुभदायक नही है। अपने आप में विश्वास करना श्रेयस्कर होगा। सांसारिक बातों में समय व ऊर्जा न खपाएँ। मंगलव्रत एवं दुर्गासप्तशति का पाठ करना श्रेयस्कर होगा।

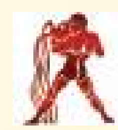

कुम्भराशि - मासफल शुभदायक हैं। पारिवारिक सुख तथा सन्तानसुख सामान्य रहेगा। कृषि एवं व्यापार कार्यों में सफलता मिलेगी। आर्थिक लाभ, मान सम्मान प्रतिष्ठा में वृद्धि।

मीनराशि - मासफल शुभदायक रहेगा। पारिवारिक सुख अनुकूल रहेगा। नवीन कार्य में सफलता मिलेगी। तीर्थाटन का योग बनेगा और धन व्यय होगा। बृहस्पति का उपासना लाभकर होगी।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

सप्तगिरि

(आध्यात्मिक मासिक पत्रिका)

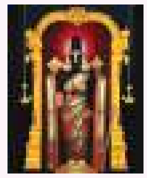

चंदा भरने का पत्र

१. नाम : ....
(अलग-अलग अक्षरों में स्पष्ट लिखें) ....
....
पिनकोड ....
मोबाइल नं ....

२. वांछित भाषा : ☐ हिन्दी ☐ तमिल ☐ कन्नडा ☐ तेलुगु ☐ अंग्रेजी ☐ संस्कृत

३. वार्षिक / जीवन चंदा :

४. चंदा का पुनरुद्धरण :

(अ) चंदा की संख्या :

(आ) भाषा :

५. पेय रकम :

६. पेय रकम का विवरण :

नकद (एम.आर.टि. नं) दिनांक :

धनादेश (कूपन नं) : दिनांक :

मांगड्राफ्ट संख्या : दिनांक :

प्रांत :

दिनांकः चंदा भरनेवाला का हस्ताक्षर

- वार्षिक चंदा : रु.६०.००, जीवन चंदा : रु.५००-००
- नूतन चंदादार या चंदा का पुनरुद्धार करनेवाले इस पत्र का उपयोग करें।
- इस कूपन को काटकर, पूरे विवरण के साथ इस पते पर भेजें–
- संस्कृत में जीवन चंदा नही है, वार्षिक चंदा रु.६०-०० मात्र है।

प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, के.टी.रोड,
तिरुपति-५१७ ५०७. (आं.प्र)

नूतन फोन नंबरों की सूचना

चंदादारों और एजेंटों को सूचित किया जाता है कि हमारे कार्यालय का दूरभाष नंबर बदल चुका है और आप नीचे दिये गये नंबरों से संपर्क करें–

कॉल सेंटर नंबर

0877 - 2233333

चंदा भरने की पूछताछ

0877 - 2277777

अर्जित सेवाएँ और आवास के अग्रिम आरक्षण के लिए कृपया इस नंबर से संपर्क करें–

STD Code: 0877

दूरभाष :

कॉल सेंटर नंबर :
2233333, 2277777.

Edited and Published on behalf of T.T.Devasthanams by **Dr.K.Radha Ramana, M.A., M.Phil, Ph.D.,** Chief Editor, T.T.D. and Printed at T.T.D. Press by **Sri R.V.Vijaykumar,** B.A., B.Ed., **Dy.E.O.,** (Publications & Press), T.T.D. Press, Tirupati-517 507.

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

'सप्तगिरि' आध्यात्मिक मासिक पत्रिका (तेलुगु, तमिल, हिन्दी, अंग्रेजी, कन्नडा, संस्कृत)

घर-घर तक 'सप्तगिरि'! यह श्री बालाजी की अक्षर संपत्ति!

कलियुग प्रत्यक्ष दैव श्री बालाजी के दिव्य वैभव को

हर महीने... सप्तगिरि पत्रिका में देखिए... पढाइये...

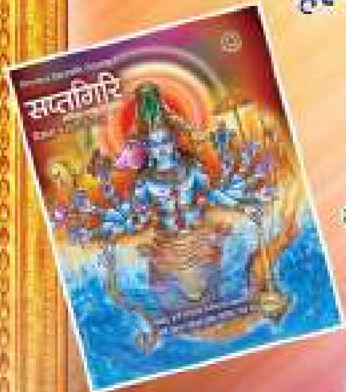

भगवानजी का दर्शन के लिए
अनेक उपाय व साधन है।
कदम-कदम पर प्रणाम स्वीकारने वाले,
आर्तत्राण परायण भगवान की कुछ लोग पुष्पार्चना करते हैं...
कुछ लोग अक्षर पुष्पों से आराधना करते हैं।

श्रीवारि के अक्षर प्रसाद 'सप्तगिरि' को
पढ़ें और पढायें, यह भी उनकी एक सेवा हैं।

हर महीने... 'सप्तगिरि' पढ़े... अपने रिश्तेदारों से पढायें!
हर महीने अपने घर में ही भगवानजी के दर्शन कर लीजिए...
तिरुमल संबंधित विशेषताएँ जान लें।

'सप्तगिरि' की अभिवृद्धि में भाग लीजिए।
सप्तगिरि मासिक पत्रिका को चंदा भरिये, भराइये।

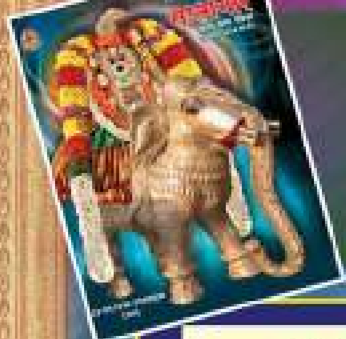

चंदा विवरण

एक प्रति...	रु. ५.००
वार्षिक चंदा...	रु. ६०.००
जीवन चंदा...	रु. ५००.००
विदेशियों को वार्षिक चंदा...	रु. ८५०.००

सूचना - संस्कृत भाषा के जीवन चंदा की सुविधा नहीं है।
केवल वार्षिक चंदा मात्र ही उपलब्ध है।

'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका
के संबंधित अन्य विवरण
के लिए संपर्क कीजिए
०८७७ - २२६४५४३
प्रधान संपादक
मोबाइल नंबर - ९८६६३२९९५५

कार्यालय का पता -
प्रधान संपादक
'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका कार्यालय
ति.ति.दे प्रेस कांपौंड,
के.टी.रोड, तिरुपति - ५१७ ५०७.

सूचना, सुझाव व शिकायतों के लिए संपर्क करें-

sapthagiri_helpdesk@tirumala.org

SAPTHAGIRI (HINDI) ILLUSTRATED MONTHLY
Published by Tirumala Tirupati Devasthanams 25-01-2019
Regd. with the Registrar of Newspapers under "RNI" No.10742, Postal Regd.No.TRP/11 - 2018-2020
Licensed to post without prepayment No.PMGK/RNP/WPP-04/2018-2020